चंद्रकांता संतति सोलहवां भाग

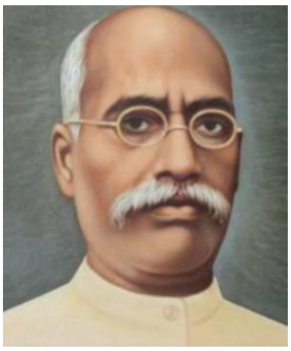

बाबू देवकीनंदन खत्री

चंद्रकांता संतति

सोलहवां भाग

बयान - 1

अब हम अपने पाठकों को पुनः जमानिया के तिलिस्म में ले चलते हैं और इन्दिरा का बचा हुआ किस्सा उसी की जुबानी सुनवाते हैं जिसे छोड़ दिया गया था।

इन्दिरा ने एक लम्बी सांस लेकर अपना किस्सा यों कहना शुरू किया -

इन्दिरा - जब मैं अपनी मां की लिखी चीठी पढ़ चुकी तो जी में खुश होकर सोचने लगी कि ईश्वर चाहेगा तो अब मैं बहुत जल्द अपनी मां से मिलूंगी और हम दोनों को इस कैद से छुटकारा मिलेगा, अब केवल इतनी ही कसर है कि दारोगा साहब मेरे पास आवें और जो कुछ वे कहें मैं उसे पूरा कर दूं। थोड़ी देर तक सोचकर मैंने अन्ना से कहा, "अन्ना, जो कुछ दारोगा साहब कहें उसे तुरन्त करना चाहिए।"

अन्ना - नहीं बेटी, तू भूलती है, क्योंकि इन चालबाजियों को समझने लायक अभी तेरी उम्र नहीं है। अगर तू दारोगा के कहे मुताबिक काम कर देगी तो तेरी मां और साथ ही उसके तू भी मार डाली जायेगी, क्योंकि इस बात में कोई सन्देह नहीं कि दारोगा ने तेरी मां से जबर्दस्ती यह चीठी लिखवाई है।

मैं - तब तुमने इस चीठी के बारे में यह कैसे कहा कि मैं तेरे लिए खुशखबरी लाई हूं?

अन्ना - खुशखबरी से मेरा मतलब यह न था कि अगर तू दारोगा के कहे मुताबिक काम कर देगी तो तुझे और तेरी मां को कैद से छुट्टी मिल जायेगी बल्कि यह था कि तेरी मां अभी तक जीती-जागती है इसका पता लग गया। क्या तुझे यह मालूम नहीं कि स्वयम् दारोगा ही ने तुझे कैद किया है?

मैं - यह तो मैं खुद तुझसे कह चुकी हूं कि दारोगा ने मुझे धोखा देकर कैद कर लिया है।

अन्ना - तो क्या तुझे छोड़ देने से दारोगा की जान बच जायगी क्या दारोगा साहब इस बात को नहीं समझते कि अगर तू छूटेगी तो सीधे राजा गोपालसिंह के पास चली जायेगी और अपना तथा लक्ष्मीदेवी का भेद उनसे कह देगी उस समय दारोगा का क्या हाल होगा।

मैं - ठीक है, दारोगा मुझे कभी न छोड़ेगा।

अन्ना - बेशक कभी न छोड़ेगा। वह कम्बख्त तो अब तक तुझे मार डाले होता, मगर अब निश्चय हो गया कि उसे तुम दोनों से अपना कुछ मतलब निकालना है इसीलिए अभी तक कैद किये हुए है। जिस दिन उसका काम हो जायगा उसी दिन तुम दोनों को मार डालेगा। जब तक उसका काम नहीं होता तभी तक तुम दोनों की जान बची है। (चीठी की तरफ इशारा करके) यह चीठी उसने इसी चालाकी से लिखवाई है जिससे तू उसका काम जल्द कर दे।

मैं - अन्ना, तू सच कहती है, अब मैं दारोगा का काम कभी न करूंगी चाहे जो हो।

अन्ना - अगर तू मेरे कहे मुताबिक करेगी तो निःसन्देह तुम दोनों की जान बच रहेगी और किसी न किसी दिन तुम दोनों को कैद से छुट्टी भी मिल जायगी।

मैं - बेशक जो तू कहेगी वही मैं करूंगी।

अन्ना - मगर मैं डरती हूं कि अगर दारोगा तुझे धमकाएगा या मारे-पीटेगा तो तू मार खाने के डर से उसका काम जरूर कर देगी।

मैं - नहीं-नहीं, कदापि नहीं, अगर वह मेरी बोटी-बोटी काटकर फेंक दे तो भी मैं तेरे कहे बिना उसका कोई भी काम नहीं करूंगी।

अन्ना - ठीक है, मगर साथ ही इसके यह भी कह न दीजियो कि अन्ना कहेगी तो मैं तेरा काम कर दूंगी।

मैं - नहीं सो तो न कहूंगी मगर कहूंगी क्या सो तो बताओ?

अन्ना - बस जहां तक हो टालमटोल करती जाइयो, आज-कल के वादे पर दो-तीन दिन टाल जाना चाहिए, मुझे आशा है कि इस बीच में हम लोग छूट जायेंगे।

सुबह की सफेदी खिड़कियों में दिखाई देने लगी और दरवाजा खोलकर दारोगा कमरे के अन्दर आता हुआ दिखाई दिया, वह सीधे आकर बैठ गया और बोला, "इन्दिरा, तू समझती होगी कि दारोगा साहब ने मेरे साथ दगाबाजी की और मुझे गिरफ्तार कर लिया, मगर मैं धर्म की कसम खाकर कहता हूं कि वास्तव में यह बात नहीं है, बल्कि सच तो यों है कि स्वयं राजा गोपालसिंह तेरे दुश्मन हो रहे हैं। उन्होंने मुझे हुक्म दिया था कि इन्दिरा को गिरफ्तार करके मार डालो, और उन्हीं की आज्ञानुसार मैं उनके कमरे मैं बैठा हुआ तुझे गिरफ्तार करने की तर्कीब सोच रहा था कि यकायक तू आ गई और मैंने तुझे गिरफ्तार कर लिया। मैं लाचार हूं कि राजा साहब का हुक्म टाल नहीं सकता मगर साथ ही इसके जब तुझे मारने का इरादा करता हूं तो मुझे दया आ जाती है और तेरी जान बचाने की तर्कीब सोचने लगता हूं। तुझे इस बात का ताज्जुब होगा कि गोपालसिंह तेरे दुश्मन क्यों हो गये, मगर मैं तेरा यह शक भी मिटाये देता हूं। असल बात यह है कि राजा साहब को लक्ष्मीदेवी के साथ शादी करना मंजूर न था और जिस खूबसूरत औरत के साथ वे शादी किया चाहते थे वह विधवा हो चुकी थी और लोगों की जानकारी में वे उसके साथ शादी नहीं कर सकते थे इसलिये

लक्ष्मीदेवी के बदले में यह दूसरी औरत उलटफेर कर दी गई। उनकी आज्ञानुसार लक्ष्मीदेवी तो मार डाली गई मगर उन लोगों को भी चुपचाप मार डालने की आज्ञा राजा साहब ने दे दी जिन्हें यह भेद मालूम हो चुका था या जिनकी बदौलत इस भेद के खुल जाने का डर था। तेरे सबब से भी लक्ष्मीदेवी का भेद अवश्य खुल जाता इसीलिए तू भी उनकी आज्ञानुसार कैद कर ली गई।"

गोपाल - (क्रोध से) क्या कम्बख्त दारोगा ने तुझे इस तरह समझाया-बुझाया?

इन्दिरा - जी हां, और यह बात उसने ऐसे ढंग से अफसोस के साथ कही कि मुझे और मेरी अन्ना को भी थोड़ी देर के लिए उसकी बातों पर पूरा विश्वास हो गया, बल्कि वह उसके बाद भी बहुत देर तक आपकी शिकायत करता रहा।

गोपाल - और मुझे वह बहुत दिनों तक तेरी बदमाशी का विश्वास दिलाता रहा था। अस्तु अब मुझे मालूम हुआ कि तू मेरा सामना करने से क्यों डरती थी। अच्छा तब क्या हुआ!

इन्दिरा - दारोगा की बात सुनकर अन्ना ने उससे कहा कि जब आपको इन्दिरा पर दया आ रही है तो कोई ऐसी तर्कीब निकालिये जिसमें इस लड़की और इसकी मां की जान बच जाय।

दारोगा - मैं खुद इसी फिक्र में लगा हुआ हूं। इसकी मां को बदमाशों ने गिरफ्तार कर लिया था मगर ईश्वर की कृपा से वह बच गई, मैंने उसे शैतानों के हाथ से बचा लिया।

अन्ना - मगर वह भी लक्ष्मीदेवी को पहिचानती है और उसकी बदौलत लक्ष्मीदेवी का भेद खुल जाना सम्भव है।

दारोगा - हां ठीक है, मगर इसके लिए भी मैंने एक बन्दोबस्त कर लिया है।

अन्ना - वह क्या?

दारोगा **-** (एक चीठी दिखाकर) देख सर्यू से मैंने यह चीठी लिखवा ली है, पहिले इसे पढ़ ले।

मैंने और अन्ना ने वह चीठी पढ़ी। उसमें यह लिखा हुआ था - "मेरी प्यारी लक्ष्मीदेवी, मुझे इस बात का बड़ा अफसोस है कि तेरे ब्याह के समय मैं न आ सकी! इसका बहुत

बड़ा कारण है जो मुलाकात होने पर तुमसे कहूंगी, मगर अपनी बेटी इन्दिरा की जुबानी यह सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि वह ब्याह के समय तेरे पास थी, बल्कि ब्याह होने के एक दिन बाद तक तेरे साथ खेलती रही।"

जब मैं चीठी पढ़ चुकी तो दारोगा ने कहा कि बस अब तू भी एक चीठी लक्ष्मीदेवी के नाम से लिख दे और उसमें यह लिख कि "मुझे इस बात का रंज है कि तेरी शादी होने के बाद एक दिन से ज्यादे मैं तेरे पास न रह सकी मगर मैं तेरी उस छवि को नहीं भूल सकती जो ब्याह के दूसरे दिन देखी थी।" मैं ये दोनों चीठियां राजा गोपालसिंह को दूंगा और तुम दोनों को छोड़ देने के लिए उनसे जिद्द करके उन्हें समझा दूंगा कि, "अब सर्यू और इन्दिरा की जुबानी लक्ष्मीदेवी का भेद कोई नहीं सुन सकता, अगर ये दोनों कुछ कहेंगी तो इन चीठियों के मुकाबिले में स्वयं झूठी बनेंगी।"

मैंने दारोगा की बातों का यह जवाब दिया कि, "बात तो आपने बहुत ठीक कही, अच्छा मैं आपके कहे मुताबिक चीठी कल लिख दूंगी।"

दारोगा - यह काम देर करने का नहीं है, इसमें जहां तक जल्दी करोगी वहां तक तुम्हें छुट्टी जल्दी मिलेगी।

मैं - ठीक है मगर इस समय मेरे सिर में बहुत दर्द है, मुझसे एक अक्षर भी न लिखा जायगा।

दारोगा - अच्छा क्या हर्ज है, कल सही।

इतना कहकर दारोगा कमरे से बाहर चला गया और फिर मुझसे और अन्ना में बातचीत होने लगी। मैंने अन्ना से कहा, "क्यों अन्ना, तू समझती है मुझे तो दारोगा की बात सच जान पड़ती है?'

अन्ना - (कुछ सोचकर) जैसी चीठी दारोगा तुमसे लिखाया चाहता है वह केवल इस योग्य ही नहीं कि यदि राजा गोपालसिंह दोषी है तो लोकनिन्दा से उनको बचावे बल्कि वह चीठी बनिस्बत उनके दारोगा के काम की ज्यादे होगी, अगर वह स्वयं दोषी है तो।

मैं - ठीक है मगर ताज्जुब की बात है कि जो राजा साहब मुझे अपनी लड़की से बढ़कर मानते थे वे ही मेरी जान के ग्राहक बन जायें!

अन्ना - कौन ठिकाना कदाचित ऐसा ही हो।

मैं - अच्छा तो अब क्या करना चाहिए?

अन्ना - (कुछ सोचकर) चीठी तो कभी न लिखनी चाहिए चाहे राजा गोपालसिंह दोषी हों या दारोगा दोषी हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि चीठी लिख देने के बाद तू मार डाली जायगी।

अन्ना की बात सुनकर मैं रोने लगी और समझ गई कि अब मेरी जान नहीं बचती और ताज्जुब नहीं कि दारोगा के मतलब की चीठी लिख देने के कारण मेरी मां इस दुनिया से उठा दी गई हो। थोड़ी देर तक तो अन्ना ने रोने में मेरा साथ दिया लेकिन इसके बाद उसने अपने को सम्हाला और सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिए। कुछ देर के बाद अन्ना ने मुझसे कहा कि "बेटी, मुझे कुछ आशा हो रही है कि हम लोगों को इस कैदखाने से निकल जाने का रास्ता मिल जायगा। मैं पहिले कह चुकी हूं और अब भी कहती हूं कि रात को (कोठरी की तरफ इशारा करके) उस कोठरी में सिर पर से गठरी फेंक देने की तरह धमाके की आवाज सुनकर मैं जाग उठी थी और जब उस कोठरी में गई तो वास्तव में एक गठरी पर निगाह पड़ी। अब जो मैं सोचती हूं तो विश्वास होता है कि उस कोठरी में कोई ऐसा दरवाजा जरूर है कि जिसे खोलकर बाहर वाला उस कोठरी में आ सके या उसमें से बाहर जा सके। इसके अतिरिक्त इस कोठरी में भी तख्तेबन्दी की दीवार है जिससे कहीं-न-कहीं दरवाजा होने का शक हर एक ऐसे आदमी को हो सकता है जिस पर हमारी तरह मुसीबत आई हो, अस्तु आज का दिन तो किसी तरह काट ले रात को मैं दरवाजा ढूंढ़ने का उद्योग करूंगी।"

अन्ना की बातों से मुझे भी कुछ ढाढ़स हुई। थोड़ी देर बाद कमरे का दरवाजा खुला और कई तरह की चीजें लिये हुए तीन आदमी कमरे के अन्दर आ पहुंचे। एक के हाथ में पानी का भरा घड़ा-लोटा और गिलास था, दूसरा कपड़े की गठरी लिये हुए था, तीसरे के हाथ में खाने की चीजें थीं। तीनों ने सब चीजें कमरे में रख दीं और पहिले की रक्खी हुई चीजें और चिरागदान वगैरह उठा ले गये और जाते समय कह गये कि 'तुम लोग स्नान करके खाओ-पीओ, तुम्हारे मतलब की सब चीजें मौजूद हैं'।

ऐसी मुसीबत में खाना-पीना किसे सूझता है, परन्तु अन्ना के समझाने-बुझाने से जान बचाने के लिए सब-कुछ करना पड़ा। तमाम दिन बीत गया, संध्या होने पर फिर हमारे कमरे के अन्दर खाने-पीने का सामान पहुंचाया गया और चिराग भी जलाया गया मगर रात को हम दोनों ने कुछ भी न खाया।

कैदखाने से निकल भागने की धुन में हम लोगों को नींद बिल्कुल न आई। शायद आधी रात बीती होगी जब अन्ना ने उठकर कमरे का वह दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया जिस राह से वे लोग आते थे, और इसके बाद मुझे उठने और अपने साथ उस कोठरी के अन्दर चलने के लिए कहा जिसमें से कपड़े की गठरी और मेरी मां के हाथ की लिखी हुई चीठी मिली थीं। मैं उठ खड़ी हुई और अन्ना के पीछे-पीछे चली। अन्ना ने चिराग हाथ में उठा लिया और धीरे-धीरे कदम रखती हुई कोठरी के अन्दर गई। मैं पहिले बयान कर चुकी हूं कि उसके अन्दर तीन कोठरियां थीं, एक में पायखाना बना हुआ था और दो कोठरियां खाली थीं। उन दोनों कोठरियों के चारों तरफ की दीवारें भी तख्तों की थीं। अन्ना हाथ में चिराग लिए एक कोठरी के अन्दर गई और उन लकड़ी वाली दीवारों को गौर से देखने लगी। मालूम होता था कि दीवार कुछ पुराने जमाने की बनी हुई है क्योंकि लकड़ी के तख्ते खराब हो गये थे, और कई तख्तों को घुन ने ऐसा बरबाद कर दिया था कि एक कमजोर लात खाकर भी उनका बच रहना कठिन जान पड़ता था। यह सब-कुछ था मगर जैसा कि देखने में वह खराब और कमजोर मालूम होती थी वैसी वास्तव में न थी क्योंकि दीवार की लकड़ी पांच या छः अंगुल से कम मोटी न होगी, जिसमें से सिर्फ अंगुल-डेढ़ अंगुल के लगभग घुनी हुई थी। अन्ना ने चाहा कि लात मारकर एक-दो तख्तों को तोड़ डाले मगर ऐसा न कर सकी।

हम दोनों आदमी बड़े गौर से चारों तरफ की दीवार को देख रहे थे कि यकायक एक छोटे से कपड़े पर अन्ना की निगाह पड़ी जो लकड़ी के दो तख्तों के बीच में फंसा हुआ था। वह वास्तव में एक छोटा-सा रूमाल था, जिसका आधा हिस्सा तो दीवार के उस पार था और आधा हिस्सा हम लोगों की तरफ था। उस कपड़े को अच्छी तरह देखकर अन्ना ने मुझे कहा, "बेटी, देख यहां एक दरवाजा अवश्य है। (हाथ का निशान बताकर) यह चारों तरफ की दरार दरवाजे को साफ बता रही है। कोई आदमी इस तरफ आया है मगर लौटकर जाती दफे जब उसने दरवाजा बन्द किया तो उसका रूमाल इस में फंसकर रह गया, शायद अंधेरे में उसने इस बात का खयाल न किया हो, और देख इस कपड़े के फंस जाने के कारण दरवाजा भी अच्छी तरह बैठा नहीं है, ताज्जुब नहीं कि वह दरवाजा खटके पर बन्द होता हो और तखता अच्छी तरह न बैठने के कारण खटका भी बन्द न हुआ हो।"

वास्तव में जो कुछ अन्ना ने कहा वही बात थी क्योंकि जब उसने उस रूमाल को अच्छी तरह पकड़कर अपनी तरफ खेंचा तो उसके साथ लकड़ी का तख्ता भी खिंचकर हम लोगों की तरफ चला आया और दूसरी तरफ जाने के लिए रास्ता निकल आया। हम दोनों आदमी उस तरफ चले गये और एक कमरे में पहुंचे। उस

लकड़ी के तख्ते में जो पेंच पर जड़ा हुआ था और जिसे हटाकर हम लोग उस पार चले गये थे दूसरी तरफ पीतल का एक मुट्ठा लगा हुआ था, अन्ना ने उसे पकड़कर खेंचा और वह दरवाजा जहां का तहां खट से बैठ गया। अब हम दोनों आदमी जिस कमरे में पहुंचे वह बहुत बड़ा था। सामने की तरफ एक छोटा-सा दरवाजा नजर आया और उसके पास जाने पर मालूम हुआ कि नीचे उतर जाने के लिए सीढ़ियां बनी हुई हैं। दाहिनी और बाईं तरफ की दीवार में छोटी - छोटी कई खिड़कियां बनी हुई थीं, दाहिनी तरफ की खिड़कियों में से एक खिड़की कुछ खुली हुई थी, मैंने और अन्ना ने उसमें झांककर देखा तो एक मरातिब नीचे छोटा-सा चौक नजर आया जिसमें साफ-सुथरा फर्श लगा हुआ था। ऊंची गद्दी पर कम्बख्त दारोगा बैठा हुआ था, उसके आगे एक शमादान जल रहा था और उसके पास ही में एक आदमी कलम-दवात और कागज लिये बैठा हुआ था।

हम दोनों आदमी दारोगा की सूरत देखते ही चौंके और डरकर पीछे हट गये। अन्ना से धीरे से कहा, "यहां भी वही बला नजर आती है, ऐसा न हो कि वह कम्बख्त हम लोगों को देख ले या फिर ऊपर चढ़ आवे।"

इतना कहकर अन्ना सीढ़ी की तरफ चली गई और धीरे से सीढ़ी का दरवाजा खेंचकर जंजीर चढ़ा दी। वह चिराग जो अपने कमरे में से लेकर यहां तक आये थे एक कोने में रखकर हम दोनों फिर उसी खिड़की के पास गये और नीचे की तरफ झांककर देखने लगे कि दारोगा क्या कर रहा है। दारोगा के पास जो आदमी बैठा था उसने एक लिखा हुआ कागज हाथ में उठाकर दारोगा से कहा, "जहां तक मुझसे बन पड़ा मैंने इस चीठी के बनाने में बड़ी मेहनत की।"

दारोगा - इसमें कोई शक नहीं कि तुमने ये अक्षर बहुत अच्छे बनाये हैं और इन्हें देखकर कोई यकायक नहीं कह सकता कि यह सर्यू का लिखा हुआ नहीं है। जब मैंने यह पत्र इन्दिरा को दिखाया तो उसे भी निश्चय हो गया कि यह उसकी मां के हाथ का लिखा हुआ है, मगर जो गौर करके देखता हूं तो सर्यू की लिखावट में और इसमें थोड़ा फर्क मालूम पड़ता है। इन्दिरा लड़की है, वह इस बात को नहीं समझ सकती, मगर इन्द्रदेव जब इस पत्र को देखेगा तो जरूर पहिचान जायगा कि सर्यू के हाथ का लिखा नहीं है बल्कि जाली बनाया गया है।

आदमी - ठीक है, अच्छा तो मैं इसके बनाने में एक दफे और मेहनत करूंगा, क्या करूं सर्यू की लिखावट ही ऐसी टेढ़ी-मेढ़ी है कि ठीक नकल नहीं उतरती, तिसमें इस

चीठी में कई अक्षर ऐसे लिखने पड़े जो कि मेरे देखे हुए नहीं हैं केवल अन्दाज ही से लिखे हैं।

दारोगा - ठीक है, ठीक है, इसमें कोई शक नहीं कि तुमने बड़ी सफाई से इसे बनाया है, खैर एक दफे और मेहनत करो, मुझे आशा है कि अबकी दफे बहुत ठीक हो जायगा। (लम्बी सांस लेकर) क्या कहें, कम्बख्त सर्यू किसी तरह मानती ही नहीं। उसे मेरी बातों पर कुछ भी विश्वास नहीं होता, यद्यपि कल मैं उसे फिर दिलासा दूंगा, अगर उसने मेरे दाम में आकर अपने हाथ से चीठी लिख दी तो इस काम को हो गया समझो नहीं तो पुनः मेहनत करनी पड़ेगी। सर्यू और इन्दिरा ने मेरे कहे मुताबिक चीठी लिख दी तो मैं बहुत जल्द उन दोनों को मारकर बखेड़ा तै करूंगा क्योंकि मुझे गदाधरसिंह (भूतनाथ) का डर बराबर बना रहता है, वह सर्यू और इन्दिरा की खोज में लगा हुआ है और उसे घड़ी-घड़ी मुझी पर शक होता है। यद्यपि मैं उससे कसम खाकर कह चुका हूं कि मुझे दोनों का हाल कुछ भी मालूम नहीं है मगर उसे विश्वास नहीं होता। क्या करूं, लाखों रुपये दे देने पर भी मैं उसकी मुट्ठी में फंसा हुआ हूं, यदि उसे जरा भी मालूम हो जायगा कि सर्यू और इन्दिरा को मैंने कैद कर रक्खा है तो वह बड़ा ही ऊधम मचावेगा और मुझे बरबाद किये बिना न रहेगा।

आदमी - गदाधरसिंह तो मुझे आज भी मिला था।

दारोगा **-** **(**चौंककर**)** क्या वह फिर इस शहर में आया है! मुझसे तो कह गया था कि मैं दो-तीन महीने के लिये जाता हूं, मगर वह तो दो-तीन दिन भी गैरहाजिर न रहा।

आदमी - वह बड़ा शैतान है, उसकी बातों का कुछ भी विश्वास नहीं हो सकता और इसका जानना तो बड़ा ही कठिन है कि वह क्या करता है, क्या करेगा या किस धुन में लगा हुआ है।

दारोगा - अच्छा तो मुलाकात होने पर उससे क्या-क्या बात हुई?

आदमी - मैं अपने घर की तरफ जा रहा था कि उसने पीछे से आवाज दी, "ओ रघुबरसिंह, ओ जैपालसिंह!"1

दारोगा - बड़ा ही बदमाश है, किसी का अदब-लेहाज करना तो जानता ही नहीं! अच्छा तब क्या हुआ।

रघुबर - उसकी आवाज सुनकर मैं रुक गया, जब वह पास आया तो बोला, "आज आधी रात के समय मैं दारोगा साहब से मिलने जाऊंगा, उस समय तुम्हें भी वहां मौजूद रहना चाहिए।" बस इतना कहकर चला गया।

दारोगा - तो इस समय वह आता ही होगा!

रघुबर - जरूर आता होगा।

1. जैपालसिंह, बालासिंह और रघुबरसिंह ये सब नाम उसी नकली बलभद्रसिंह के हैं।

दारोगा - कम्बख्त ने नाकों दम कर दिया है।

इतने ही में बाहर से घंटी बजने की आवाज आई, जिसे सुन दारोगा से रघुबरसिंह ने कहा, "देखो दरबान क्या कहता है, मालूम होता है गदाधरसिंह आ गया।"

रघुबरसिंह उठकर बाहर गया और थोड़ी ही देर में गदाधरसिंह को अपने साथ लिये हुए दारोगा के पास आया। गदाधरसिंह को देखते ही दारोगा उठ खड़ा हुआ और बड़ी खातिरदारी और तपाक के साथ मिलकर उसे अपने पास बैठाया।

दारोगा **-** (गदाधरसिंह से) आप कब आये!

गदाधर - मैं गया कब और कहां था!

दारोगा - आप ही ने कहा था कि मैं दो-तीन महीने के लिए कहीं जा रहा हूं।

गदाधर - हां, कहा तो था मगर एक बहुत बड़ा सबब आ पड़ने से लाचार होकर रुक जाना पड़ा।

दारोगा - क्या वह सबब मैं भी सुन सकता हूं।

गदाधर - हां-हां आप ही के सुनने लायक तो वह सबब है। क्योंकि उसके कर्ता-धर्ता तो आप ही हैं।

दारोगा - तो जल्द कहिये।

गदाधर - जाते ही जाते एक आदमी ने मुझे निश्चय दिलाया कि सर्यू और इन्दिरा आप ही के कब्जे में हैं अर्थात् आप ही ने उन्हें कैद करके कहीं छिपा रक्खा है।

दारोगा - (अपने दोनों कानों पर हाथ रखके) राम-राम! किस कम्बख्त ने मुझ पर यह कलंक लगाया नारायण-नारायण! मेरे दोस्त, मैं तुम्हें कई दफे कसमें खाकर कह चुका हूं कि सर्यू और इन्दिरा के विषय में कुछ भी नहीं जानता मगर तुम्हें मेरी बातों का विश्वास ही नहीं होता।

गदाधर - न मेरी बातों पर आपको विश्वास करना चाहिए और न आपकी कही हुई बातों को मैं ही ब्रह्मवाक्य समझ सकता हूं। बात यह है कि इन्द्रदेव को मैं अपने सगे भाई से बढ़कर समझता हूं, चाहे मैंने आपसे रिश्वत लेकर बुरा काम क्यों न किया हो मगर अपने दोस्त इन्द्रदेव को किसी तरह का नुकसान पहुंचने न दूंगा। आप सर्यू और इन्दिरा के बारे में बार-बार कसमें खाकर अपनी सफाई दिखाते हैं और मैं जब उन लोगों के बारे में तहकीकात करता हूं तो बार-बार यही मालूम पड़ता है कि वे दोनों आपके कब्जे में हैं, अस्तु आज मैं एक आखिरी बात आपसे कहने आया हूं, अबकी दफे आप खूब अच्छी तरह समझ-बूझकर जवाब दें।

दारोगा - कहो-कहो, क्या कहते हो? मैं सब तरह से तुम्हारी दिलजमई करा दूंगा...

गदाधर - आज मैं इस बात का निश्चय करके आया हूं कि इन्दिरा और सर्यू का हाल आपको मालूम है, अस्तु साफ-साफ कहे देता हूं कि यदि वे दोनों आपके कब्जे में हों तो ठीक-ठीक बता दीजिए, उनको छोड़ देने पर इस काम के बदले में जो कुछ आप कहें मैं करने को तैयार हूं लेकिन यदि आप इस बात से इनकार करेंगे और पीछे साबित होगा कि आप ही ने उन्हें कैद किया था तो मैं कसम खाकर कहता हूं कि सबसे बढ़कर बुरी मौत जो कही जाती है वही आपके लिए कायम की जायगी।

दारोगा - जरा जुबान सम्हालकर बातें करो। मैं तो दोस्ताना ढंग पर नरमी के साथ तुमसे बातें करता हूं और तुम तेज हुए जाते हो!

गदाधर - जी मैं आपके दोस्ताना ढंग को अच्छी तरह समझता हूं, अपनी कसमों का विश्वास तो उसे दिलाइए जो आपको केवल बाबाजी समझता हो! मैं तो आपको पूरा झूठा, बेईमान और विश्वासघाती समझता हूं और आपका कोई हाल मुझसे छिपा हुआ नहीं है। जब मैंने कलमदान आपको वापस किया था तब भी आपने कसम खाई थी कि तुम्हारे और तुम्हारे दोस्तों के साथ कभी किसी तरह की बुराई न करूंगा मगर फिर भी आप चालबाजी करने से बाज न आये!

दारोगा - यह सब-कुछ ठीक है मगर मैं जब एक दफे कह चुका कि सर्यू और इन्दिरा का हाल मुझे कुछ भी मालूम नहीं है तब तुम्हें अपनी बात पर ज्यादे खींच न करना

चाहिए, हां अगर तुम इस बात को साबित कर सको तो जो कुछ कहो मैं जुर्माना देने के लिए तैयार हूं, यों अगर बेफायदे का तकरार बढ़ाकर लड़ने का इरादा हो तो बात ही दूसरी है। इसके अतिरिक्त अब तुम्हें जो कुछ कहना हो इसको खूब सोच-समझकर कहो कि तुम किसके मकान में और कितने आदमियों को साथ लेकर आये हो।

इतना कहकर इन्दिरा रुक गई और एक लम्बी सांस लेकर उसने राजा गोपालसिंह और दोनों कुमारों से कहा -

इन्दिरा - गदाधरसिंह और दारोगा में इस ढंग की बातें हो रही थीं और हम दोनों खिड़की में से सुन रहे थे। मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि गदाधरसिंह हम दोनों मां-बेटियों को छुड़ाने की फिक्र में लगा हुआ है। मैंने अन्ना के कान में मुंह लगा के कहा कि, "देख अन्ना, दारोगा हम लोगों के बारे में कितना झूठ बोल रहा है! नीचे उतर जाने के लिए रास्ता मौजूद ही है, चलो हम दोनों आदमी नीचे पहुंचकर गदाधरसिंह के सामने खड़े हो जायं।" अन्ना ने जवाब दिया कि "मैं भी यही सोच रही हूं, मगर इस बात का खयाल है कि अकेला गदाधरसिंह हम लोगों को किस तरह छुड़ा सकेगा, कहीं ऐसा न हो कि हम लोगों को अपने सामने देखकर दारोगा गदाधरसिंह को भी गिरफ्तार कर ले, फिर हमारा छुड़ाने वाला कोई भी न रहेगा!" अन्ना नीचे उतरने से हिचकती थी मगर मैंने उसकी बात न मानी, आखिर लाचार होकर मेरा हाथ पकड़े हुए वह नीचे उतरी और गदाधरसिंह के पास खड़ी होकर बोली, "दारोगा झूठा है, इस लड़की को इसी ने कैद कर रक्खा है और इसकी मां को भी न मालूम कहां छिपाये हुए है।"

मेरी सूरत देखते ही दारोगा का चेहरा पीला पड़ गया और गदाधरसिंह की आंखें मारे क्रोध के लाल हो गईं। गदाधरसिंह ने दारोगा से कहा, "क्यों बे हरामजादे के बच्चे! क्या अब भी तू अपनी कसमों पर भरोसा करने के लिए मुझसे कहेगा!"

गदाधरसिंह की बातों का जवाब दारोगा ने कुछ भी न दिया और इधर-उधर झांकने लगा। इत्तिफाक से वह कलमदान भी उसी जगह पड़ा हुआ था जिसके ऊपर मेरी तस्वीर थी और जो गदाधरसिंह ने रिश्वत लेकर दारोगा को दे दिया था। दारोगा असल में यह देख रहा था कि गदाधरसिंह की निगाह उस कलमदान पर तो नहीं पड़ी मगर वह कलमदान गदाधरसिंह की नजरों से दूर न था, अस्तु उसने दारोगा की अवस्था देखकर फुर्ती के साथ वह कलमदान उठा लिया और दूसरे हाथ से तलवार खींचकर सामने खड़ा हो गया। उस समय दारोगा को विश्वास हो गया कि अब उसकी जान किसी तरह नहीं बच सकती। यद्यपि रघुबरसिंह उसके पास बैठा हुआ था मगर

वह इस बात को खूब जानता था कि हमारे ऐसे दस आदमी भी गदाधरसिंह को काबू में नहीं कर सकते, इसलिए उसने मुकाबला करने की हिम्मत न की और अपनी जगह से उठकर भागने लगा परन्तु जा न सका, गदाधरसिंह ने उसे एक लात ऐसी जमाई कि वह धम्म से जमीन पर गिर पड़ा और बोला, "मुझे क्यों मारते हो, मैंने क्या बिगाड़ा है मैं तो खुद यहां से चले जाने को तैयार हूं!"

गदाधरसिंह ने कलमदान कमरबन्द में खोंसकर कहा, "मैं तेरे भागने को खूब समझता हूं, तू अपनी जान बचाने की नीयत से नहीं भागता बल्कि बाहर पहरे वाले सिपाहियों को होशियार करने के लिए भागता है। खबरदार अपनी जगह से हिलेगा तो अभी भुट्टे की तरह तेरा सिर उड़ा दूंगा, (दारोगा से) बस अब तुम भी अगर अपनी जान बचाया चाहते हो तो चुपचाप बैठे रहो!"

गदाधरसिंह की डपट से दोनों हरामखोर जहां के तहां रह गए, अपनी जगह से हिलने या मुकाबला करने की हिम्मत न पड़ी। हम दोनों को साथ लिये हुए गदाधरसिंह उस मकान के बाहर निकल आया। दरवाजे पर कई पहरेदार सिपाही मौजूद थे मगर किसी ने रोक-टोक न की और हम लोग तेजी के साथ कदम बढ़ाते हुए उस गली के बाहर निकल गये। उस समय मालूम हुआ कि हम लोग जमानिया के बाहर नहीं हैं।

गली के बाहर निकलकर जब हम लोग सड़क पर पहुंचे तो घोड़ों का एक रथ और दो सवार दिखाई पड़े। गदाधरसिंह ने मुझको और अन्ना को रथ पर सवार कराया और आप भी उसी रथ पर बैठ गया। 'हूं' करने के साथ ही रथ तेजी के साथ रवाना हुआ और पीछे-पीछे दोनों सवार भी घोड़ा फेंकते हुए जाने लगे।

उस समय मेरे दिल में दो बातें पैदा हुईं, एक तो यह कि गदाधरसिंह ने दारोगा को जीता क्यों छोड़ दिया, दूसरी यह कि हम लोगों को राजा गोपालसिंह के पास न ले जाकर कहीं और क्यों लिए जाता है! मगर मुझे इस विषय में कुछ पूछने की आवश्यकता न पड़ी क्योंकि शहर के बाहर निकल जाने पर गदाधरसिंह ने स्वयं मुझसे कहा, "बेटी इन्दिरा, निःसन्देह कम्बख्त दारोगा ने तुझे बड़ा ही कष्ट दिया होगा और तू सोचती होगी कि मैंने दारोगा को जीता क्यों छोड़ दिया तथा तुझे राजा गोपालसिंह के पास न ले जाकर अपने घर क्यों लिये जाता हूं, अस्तु मैं इसका जवाब इसी समय दे देना उचित समझता हूं। दारोगा को मैंने यह सोचकर छोड़ दिया कि अभी तेरी मां का पता लगाना है और निःसन्देह वह भी दारोगा ही के कब्जे में है जिसका पता मुझे लग चुका है, तथा राजा साहब के पास मैं तुझे इसलिये नहीं ले गया कि महल में बहुत-से आदमी ऐसे हैं जो दारोगा के मेली हैं, राजा गोपालसिंह

तथा मैं भी उन्हें नहीं जानता। ताज्जुब नहीं कि वहां पहुंचने पर तू फिर किसी मुसीबत में पड़ जाय।"

मैं - आपका सोचना बहुत ठीक है, मेरी मां भी महल ही में से गायब हो गई थी। तो क्या आप इस बात की खबर भी राजा गोपालसिंह को न करेंगे?

गदा - राजा साहब को इस मामले की खबर जरूर की जायगी मगर अभी नहीं।

मैं - तब कब?

गदाधर - जब तेरी मां को भी कैद से छुड़ा लूंगा तब। हां अब तू अपना हाल कह कि दारोगा ने तुझे कैसे गिरफ्तार कर लिया और यह दाई तेरे पास कैसे पहुंची?

मैं अपना और अपनी अन्ना का किस्सा शुरू से आखीर तक पूरा-पूरा कह गई जिसे सुनकर गदाधरसिंह का बचा-बचाया शक भी जाता रहा और उसे निश्चय हो गया कि मेरी मां भी दारोगा ही के कब्जे में है।

सबेरा हो जाने पर हम लोग सुस्ताने और घोड़ों को आराम देने के लिए एक जगह कुछ देर तक ठहरे और फिर उसी तरह रथ पर सवार हो रवाना हुए। दोपहर होते-होते हम लोग एक ऐसी जगह पहुंचे जहां दो पहाड़ियों की तलहटी (उपत्यका) एक साथ मिली थी। वहां सभों को सवारी छोड़कर पैदल चलना पड़ा। मैं यह नहीं जानती कि सवारी, साथ वाले और घोड़े किधर रवाना किये गये या उनके लिए अस्तबल कहां बना हुआ था, मुझे और अन्ना को घुमाता और चक्कर देता हुआ गदाधरसिंह पहाड़ के दर्रे में ले गया जहां एक छोटा-सा मकान अनगढ़ पत्थर के ढोकों से बना हुआ था, कदाचित् वह गदाधरसिंह का अड्डा हो। वहां उसके कई आदमी थे जिनकी सूरत आज तक मुझे याद है। अब जो मैं विचार करती हूं तो यही कहने की इच्छा होती है कि वे लोग बदमाशी, बेरहमी और डकैती के सांचे में ढले हुए थे तथा उनकी सूरत-शक्ल और पोशाक की तरफ ध्यान देने से डर मालूम होता था।

वहां पहुंचकर गदाधरसिंह ने मुझसे और अन्ना से कहा कि तुम दोनों बेखौफ होकर कुछ दिन तक आराम करो, मैं सर्यू को छुड़ाने की फिक्र में जाता हूं, जहां तक होगा बहुत जल्द लौट आऊंगा। तुम दोनों को किसी तरह की तकलीफ न होगी, खाने-पीने का सामान यहां मौजूद ही है और जितने आदमी यहां हैं सब तुम्हारी खिदमत करने के लिए तैयार हैं इत्यादि, बहुत-सी बातें गदाधरसिंह ने हम दोनों को समझाई और अपने आदमियों से भी बहुत देर तक बातें करता रहा। दो पहर दिन और तमाम रात

गदाधरसिंह वहां रहा तथा सुबह के वक्त फिर हम दोनों को समझाकर जमानिया की तरफ रवाना हो गया।

मैं तो समझती थी कि अब मुझे पुनः मुसीबत का सामना न करना पड़ेगा और मैं गदाधरसिंह की बदौलत अपनी मां तथा लक्ष्मीदेवी से भी मिलकर सदैव के लिए सुखी हो जाऊंगी, मगर अफसोस मेरी मुराद पूरी न हुई और उस दिन के बाद फिर मैंने गदाधरसिंह की सूरत भी न देखी। मैं नहीं कह सकती कि वह किसी आफत में फंस गया या रुपये के लालच ने उसे हम लोगों का भी दुश्मन बना दिया। इसका असल हाल उसी की जुबानी मालूम हो सकता है - यदि वह अपना हाल ठीक-ठीक कह देते, अस्तु अब मैं ये बयान करती हूं कि उस दिन के बाद मुझ पर क्या मुसीबतें गुजरीं और मैं अपनी मां के पास तक क्योंकर पहुंची।

गदाधरसिंह के चले जाने के बाद आठ दिन तक तो मैं बेखौफ बैठी रही, पर नौवें दिन से मेरी मुसीबत की घड़ी फिर शुरू हो गई। आधी रात का समय था, मैं और अन्ना एक कोठरी में सोई हुई थीं, यकायक किसी की आवाज सुनकर हम दोनों की आंखें खुल गई और तब मालूम हुआ कि कोई दरवाजे के बाहर किवाड़ खटखटा रहा है। अन्ना ने उठकर दरवाजा खोला तो पंडित मायाप्रसाद पर निगाह पड़ी, कोठरी के अन्दर चिराग जल रहा था और मैं पंडित मायाप्रसाद को अच्छी तरह पहिचानती थी।

बयान **- 2**

इन्दिरा ने जब अपना किस्सा कहते-कहते पंडित मायाप्रसाद का नाम लिया तो राजा गोपालसिंह चौंक गये और उन्होंने ताज्जुब में आकर इन्दिरा से पूछा -

गोपाल - मायाप्रसाद कौन?

इन्दिरा - आपके कोषाध्यक्ष (खजांची)।

गोपाल - क्या उसने भी तुम्हारे साथ दगा की?

इन्दिरा - सो मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकती, मेरा हाल सुनकर कदाचित् आप कुछ अनुमान कर सकें। क्या मायाप्रसाद अब भी आपके यहां काम करते हैं?

गोपाल - हां, है तो सही मगर आजकल मैंने उसे किसी दूसरी जगह भेजा है। अस्तु अब मैं इस बात को बहुत जल्द सुनना चाहता हूं कि उसने तेरे साथ क्या किया?

हमारे पाठक महाशय पहले भी मायाप्रसाद का नाम सुन चुके हैं। सन्तति के पन्द्रहवें भाग के तीसरे बयान में इसका जिक्र आ चुका है, तारासिंह के नौकर ने नानक की स्त्री श्यामा के प्रेमियों के नाम बताये थे उन्हीं में उनका नाम भी दर्ज हो चुका है। ये महाशय जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे और अपने को ऐयार भी लगाते थे।

इन्दिरा ने फिर अपना किस्सा कहना शुरू किया -

इन्दिरा - उस समय मैं मायाप्रसाद को देखकर बहुत खुश हुई और समझी कि मेरा हाल राजा साहब (आप) को मालूम हो गया है और राजा साहब ही ने इन्हें मेरे पास भेजा है। मैं जल्दी से उठकर उनके पास गई और मेरी अन्ना ने उन्हें दण्डवत करके कोठरी में आने के लिए कहा जिसके जवाब में पंडितजी बोले, "मैं कोठरी के अन्दर नहीं आ सकता और न इतनी मोहलत है।"

मैं - क्यों?

मायाप्रसाद - मैं इस समय केवल इतना ही कहने आया हूं कि तुम लोग जिस तरह बन पड़े अपनी जान बचाओ और जहां तक जल्दी हो सके यहां से निकल भागो क्योंकि गदाधरसिंह दुश्मनों के हाथ में फंस गया है और थोड़ी ही देर में तुम लोग भी गिरफ्तार होना चाहती हो।

मायाप्रसाद की बात सुनकर मेरे तो होश उड़ गये। मैंने सोचा कि अब अगर किसी तरह दारोगा मुझे पकड़ पावेगा तो कदापि जीता न छोड़ेगा। आखिर अन्ना ने घबड़ाकर पंडितजी से पूछा, "हम लोग भागकर कहां जायें और किसके सहारे पर भागें।" पंडितजी ने क्षण भर सोचकर कहा, "अच्छा तुम दोनों मेरे पीछे चली आओ।"

उस समय हम दोनों ने इस बात का जरा भी खयाल न किया कि पंडितजी सच बोलते हैं या दगा करते हैं। हम दोनों आदमी पंडितजी को बखूबी जानते थे और उन पर विश्वास करते थे, अस्तु उसी समय चलने के लिए तैयार हो गये और कोठरी के बाहर निकलकर उनके पीछे-पीछे रवाना हुए। जब मकान के बाहर निकले तो दरवाजे के दोनों तरफ कई आदमियों को टहलते हुए देखा मगर अंधेरी रात होने और जल्दी-जल्दी निकल भागने की धुन में लगे रहने के कारण उन लोगों को पहिचान न सकी इसीलिए नहीं कह सकती कि वे लोग गदाधरसिंह के आदमी थे या किसी दूसरे के। उन आदमियों ने हम लोगों से कुछ नहीं पूछा और हम दोनों बिना किसी रुकावट के पंडितजी के पीछे-पीछे जाने लगे। थोड़ी दूर जाकर दो आदमी और मिले, एक के हाथ में मशाल थी और दूसरे के हाथ में नंगी तलवार। निःसन्देह वे दोनों आदमी

मायाप्रसाद के नौकर थे जो हुक्म पाते ही हम लोगों के आगे-आगे रवाना हुए। उस पहाड़ी के नीचे उतरने का रास्ता बहुत ही पेचीला और पथरीला था। यद्यपि हम दोनों आदमी एक दफे उस रास्ते को देख चुके थे मगर फिर भी किसी के राह दिखाये बिना वहां से निकल जाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था, पर एक तो हम लोग मायाप्रसाद के पीछे-पीछे जा रहे थे दूसरे मशाल की रोशनी साथ-साथ थी इसलिए शीघ्रता से हम लोग पहाड़ी के नीचे उतर गए और पंडितजी की आज्ञानुसार दाहिनी तरफ घूमकर जंगल ही जंगल चलने लगे। सबेरा होते-होते हम लोग एक खुले मैदान में पहुंचे और वहां एक छोटा-सा बागीचा नजर पड़ा। पंडितजी ने हम दोनों से कहा कि तुम लोग बहुत थक गई हो इसलिए थोड़ी देर तक बागीचे में आराम कर लो तब तक हम सवारी का बन्दोबस्त करते हैं जिसमें आज ही तुम राजा गोपालसिंह के पास पहुंच जाओ।

मुझे उस छोटे बागीचे में किसी आदमी की सूरत दिखाई न पड़ी। न तो वहां का कोई मालिक नजर आया और न किसी माली या नौकर ही पर नजर पड़ी। मगर बागीचा बहुत साफ और हरा-भरा था। पंडितजी ने अपने दोनों आदमियों को किसी काम के लिए रवाना किया और हम दोनों को उस बागीचे में बेफिक्री के साथ रहने की आज्ञा देकर खुद भी आधी घड़ी के अन्दर ही लौट आने का वादा करके कहीं चले गये। पंडितजी और उनके आदमियों को गये हुए अभी चौथाई घड़ी भी न बीती होगी कि दो आदमियों को साथ लिये हुए कम्बख्त दारोगा बाग के अन्दर आता हुआ दिखाई पड़ा।

बयान **- 3**

दारोगा की सूरत देखते ही मेरी और अन्ना की जान सूख गई और हम दोनों को विश्वास हो गया कि पंडितजी ने हमारे साथ दगा की। उस समय सिवा जान देने के और मैं कर क्या सकती थी इधर-उधर देखा पर जान देने का कोई जरिया दिखाई न पड़ा। अगर उस समय मेरे पास कोई हर्बा होता तो मैं जरूर अपने को मार डालती। दारोगा ने भी मुझे दूर से देखा और कदम बढ़ाता हुए हम दोनों के पास पहुंचा। मारे क्रोध के उसकी आंखें लाल हो रही थीं और होंठ कांप रहे थे। उसने अन्ना की तरफ देखकर कहा, "क्यों री कम्बख्त लौंडी, अब तू मेरे हाथ से बचकर कहां जायगी यह सारा फसाद तेरा ही उठाया हुआ है, न तू दरवाजा खोलकर दूसरे कमरे में जाती न गदाधरसिंह को इस बात की खबर होती, तूने ही इन्दिरा को ले भागने की नीयत से मेरी जान आफत में डाली थी, अस्तु अब मैं तेरी जान लिए बिना नहीं रह सकता क्योंकि तुझ पर मुझे बड़ा ही क्रोध है।"

इतना कहकर दारोगा ने म्यान से तलवार निकाल ली और एक ही हाथ में बेचारी अन्ना का सिर धड़ से अलग कर दिया, उसकी लाश तड़पने लगी और मैं चिल्लाकर उठ खड़ी हुई।

इतना हाल कहते-कहते इन्दिरा की आंखों में आंसू भर आया। इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह और राजा गोपालसिंह को भी उसकी अवस्था पर बड़ा दुःख हुआ और बेईमान नमकहराम दारोगा को क्रोध से याद करने लगे। तीनों भाइयों ने इन्दिरा को दिलासा दिया और चुप कराके अपना किस्सा पूरा करने के लिए कहा। इन्दिरा ने आंसू पोंछकर कहना शुरू किया -

इन्दिरा - उस समय मैं समझती थी कि दारोगा मेरी अन्ना को तो मार ही चुका है, अब उसी तलवार से मेरा भी सिर काटके बखेड़ा तै करेगा, मगर ऐसा न हुआ। उसने रूमाल से तलवार पोंछकर म्यान में रख ली और अपने नौकर के हाथ से चाबुक ले मेरे सामने आकर बोला, "अब बुला गदाधरसिंह को, आकर तेरी जान बचाये।"

इतना कहकर उसने मुझे उसी चाबुक से मारना शुरू किया। मैं मछली की तरह तड़प रही थी, लेकिन उसे कुछ भी दया नहीं आती थी और वह बार-बार यही कहके चाबुक मारता था कि अब बता मेरे कहे मुताबिक चीठी लिख देगी या नहीं पर मैं भी इस बात का दिल में निश्चय कर चुकी थी कि चाहे कैसी ही दुर्दशा से मेरी जान क्यों न ली जाय मगर उसके कहे मुताबिक चीठी कदापि न लिखूंगी।

चाबुक की मार खाकर मैं जोर-जोर से चिल्लाने लगी। उसी समय दाहिनी तरफ से एक औरत दौड़ती हुई आई जिसने डपटकर दारोगा से कहा, "क्यों चाबुक मार-मारकर इस बेचारी की जान ले रहे हो ऐसा करने से तुम्हारा मतलब कुछ भी न निकलेगा। तुम जो कुछ चाहते हो, मुझे कहो मैं बात-की-बात में तुम्हारा काम करा देती हूं।"

उस औरत की उम्र का पता बताना कठिन था, न तो वह कमसिन थी और न बूढ़ी ही थी, शायद तीस-पैंतीस वर्ष की अवस्था हो या इससे कुछ कम-ज्यादे हो। उसका रंग काला और बदन गठीला तथा मजबूत था, घुटने से कुछ नीचे तक का पायजामा और उसके ऊपर दक्षिणी ढंग की साड़ी पहिरे हुए थी, जिसकी लांग पीछे की तरफ खुसी थी। कमर में एक मोटा कपड़ा लपेटे हुए थी जिसमें शायद कोई गठरी या और कोई चीज बंधी हुई हो।

उस औरत की बात सुनकर दारोगा ने चाबुक मारना बन्द कर दिया और उसकी तरफ देखकर कहा, "तू कौन है?'

औरत - चाहे मैं कोई होऊं इससे कुछ मतलब नहीं, तुम जो कुछ चाहते हो मुझसे कहो, मैं तुम्हारी ख्वाहिश पूरी कर दूंगी, चाबुक मारते समय जो कुछ तुम कहते हो उससे मालूम होता है कि इस लड़की से तुम कुछ लिखाया चाहते हो! इससे जो कुछ लिखवाना हो मुझे बताओ मैं लिखवा दूंगी, इस समय मारने-पीटने से कोई काम न चलेगा क्योंकि इसके एक पक्षपाती ने जिसने अभी तुम्हारे आने की खबर दी थी इसे समझा-बुझाकर बहुत पक्का कर दिया है और खुद (हाथ का इशारा करके) उस कुएं में जा छिपा है, वह जरूर तुम पर वार करेगा, मेरे साथ चलो, मैं दिखा दूं। पहिले इसे दुरुस्त करो तब उसके बाद जो कुछ इस लड़की को कहोगे वह झख मारके कर देगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।

दारोगा - क्या तूने खुद उस आदमी को देखा था?

औरत - हां-हां, कहती तो हूं कि मेरे साथ उस कुएं पर चलो, मैं उस आदमी को दिखा देती हूं, दस-बारह कदम पर कुआं है कुछ दूर तो है नहीं।

दारोगा - अच्छा चलकर मुझे बताओ, (अपने दोनों आदमियों से) तुम दोनों इस लड़की के पास खड़े रहो।

वह औरत कुएं की तरफ बढ़ी और दारोगा उसके पीछे-पीछे चला। वास्तव में वह कुआं बहुत दूर न था। जब दारोगा को लिये हुए वह औरत कुएं पर पहुंची तो अन्दर झांककर बोली, "देखो वह छिपकर बैठा है!"

दारोगा ने ज्यों ही झांककर कुएं के अन्दर देखा उस औरत ने पीछे से धक्का दिया और वह कम्बख्त धड़ाम से कुएं के अन्दर जा रहा। यह कैफियत उसके दोनों साथी दूर से देख रहे थे और मैं भी देख रही थी। जब दारोगा के दोनों सिपाहियों ने देखा कि उस औरत ने जान-बूझकर हमारे मालिक को कुएं में ढकेल दिया है तो दोनों आदमी तलवार खेंचकर उस औरत की तरफ दौड़े। जब पास पहुंचे तो वह औरत जोर से हंसी और एक तरफ को भाग चली। उन दोनों ने उसका पीछा किया मगर वह औरत दौड़ने में इतनी तेज थी कि वे दोनों उसे पा न सकते थे। उसी बागीचे के अन्दर वह औरत चक्कर देने लगी और उन दोनों के हाथ न आई। वह समय उन दोनों के लिए बड़ा ही कठिन था, वे दोनों इस बात को जरूर सोचते होंगे कि अगर अपने मालिक को बचाने की नीयत से कुएं पर जाते हैं तो वह औरत भाग जायगी या ताज्जुब नहीं कि उन्हें भी

उसी कुएं में ढकेल दे। आखिर जब उस औरत ने उन दोनों को खूब दौड़ाया तो उन दोनों ने आपस में कुछ बात की और एक आदमी तो उस कुएं की तरफ चला गया तथा दूसरे ने उस औरत का पीछा किया। जब उस औरत ने देखा कि अब दो में से एक रह गया तो वह खड़ी हो गई और जमीन पर से ईंट का टुकड़ा उठाकर उस आदमी की तरफ जोर से फेंका। उस औरत का निशाना बहुत सच्चा था जिससे वह आदमी बच न सका और ईंट का टुकड़ा इस जोर से उसके सिर में लगा कि सिर फट गया और वह दोनों हाथों से सिर को पकड़कर जमीन पर बैठ गया। उस औरत ने पुनः दूसरी ईंट मारी, तीसरी मारी और चौथी ईंट खाकर तो वह जमीन पर लेट गया। उसी समय उसने खंजर निकाल लिया जो उसकी कमर में छिपा हुआ था और दौड़ती हुई उसके पास जाकर खंजर से उसका सिर काट डाला। मैं यह तमाशा दूर से देख रही थी। जब वह एक आदमी को समाप्त कर चुकी तो उस दूसरे के पास आई जो कुएं पर खड़ा अपने मालिक को निकालने की फिक्र कर रहा था। एक ईंट का टुकड़ा उसकी तरफ जोर से फेंका जो गरदन में लगा। वह आदमी हाथ में नंगी तलवार लिये उस औरत पर झपटा मगर उसे पा न सका। उस औरत ने फिर उस आमदी को दौड़ाना शुरू किया और बीच-बीच में ईंट और पत्थरों से उसकी भी खबर लेती जाती थी। वह आदमी भी ईंट और पत्थर के टुकड़े उस औरत पर फेंकता था मगर औरत इतनी तेज और फुर्तीली थी कि उसके सब वार बराबर बचाती चली गई, मगर उसका वार एक भी खाली न जाता था। आखिर उस आदमी ने भी इतनी मार खाई कि खड़ा होना मुश्किल हो गया और वह हताश होकर जमीन पर बैठ गया। बस जमीन पर बैठने की देर थी कि उस औरत ने धड़ाधड़ पत्थर मारना शुरू किया, यहां तक कि वह अधमुआ होकर जमीन पर लेट गया। उस औरत ने उसके पास पहुंचकर उसका सिर भी धड़ से अलग कर दिया, इसके बाद दौड़ती हुई मेरे पास आई बोली, "बेटी, तूने देखा कि मैंने तेरे दुश्मनों की कैसी खबर ली! मैं तो उस कम्बख्त (दारोगा) को भी पत्थर मार-मारकर मार डालती मगर डरती हूं कि विलम्ब हो जाने से उसके और भी संगी-साथी न आ पहुंचें। अगर ऐसा हुआ तो बड़ी मुश्किल होगी अस्तु उसे जाने दे और मेरे साथ चल, मैं तुझे हिफाजत से तेरे घर या जहां कहेगी पहुंचा दूंगी।"

यद्यपि चाबुक की मार खाने से मेरी बुरी हालत हो गई थी मगर अपने दुश्मनों की ऐसी दशा देख मैं खुश हो गई और उस औरत को साक्षात् माता समझकर उसके पैरों पर गिर पड़ी। उसने मुझे बड़े प्यार से उठाकर गले से लगा लिया और मेरा हाथ पकड़े हुए बाग के पिछले तरफ ले चली। बाग के पीछे की तरफ बाहर निकल जाने के लिए एक खिड़की थी और उसके पास सरपत का एक साधारण जंगल था। वह औरत मुझे लिये हुए उसी सरपत के जंगल में घुस गई। उस जंगल में उस औरत का घोड़ा बंधा

हुआ था। उसने घोड़ा खोला, चारजामा इत्यादि ठीक करके उस पर मुझे बैठाया और पीछे आप भी सवार हो गई, घोड़ा तेजी के साथ रवाना हुआ और तब मैं समझी कि मेरी जान बच गई।

वह औरत पहर-भर तक बराबर घोड़ा फेंके चली गई और जब एक घने जंगल में पहुंची तो घोड़े की चाल धीमी कर देर तक धीरे-धीरे चलकर एक कुटी के पास पहुंची जिसके दरवाजे पर दो-तीन आदमी बैठे आपस में कुछ बातें कर रहे थे। उस औरत को देखते ही वे लोग उठ खड़े हुए और अदब के साथ सलाम करके घोड़े के पास चले आए। औरत ने घोड़े के नीचे उतर कर मुझे भी उतार लिया। उन आदमियों में से एक ने घोड़े की लगाम थाम ली और उसे टहलाने को ले गया। दूसरे आदमी ने कुछ इशारा पाकर कुटी से एक कम्बल ला जमीन पर बिछा दिया और एक आदमी हाथ में घड़ा, लोटा और रस्सी लेकर जल भरने के लिए चला गया। औरत ने मुझे कम्बल पर बैठने का इशारा किया और आप भी कमर हलकी करने के बाद उसी कम्बल पर बैठ गई, तब उसने मुझसे कहा कि अब तू अपना सच्चा-सच्चा हाल बता कि तू कौन है और इस मुसीबत में क्योंकर फंसी तथा वह बुड्ढा शैतान कौन था, तब तक मेरा आदमी पानी लाता है और खाने-पीने का बन्दोबस्त करता है।

उस औरत ने दया करके मेरी जान बचाई थी और जहां मैं चाहती थी वहां पहुंचा देने के लिए तैयार थी और मेरे दिल ने भी उसे माता के समान मान लिया था, इसलिए मैंने उससे कोई बात नहीं छिपाई और अपना सच्चा-सच्चा हाल शुरू से आखिर तक कह सुनाया। उसे मेरी अवस्था पर बहुत तरस आया और वह बहुत देर तक तसल्ली और दिलासा देती रही। जब मैंने उसका नाम पूछा तो उसने अपना नाम 'चम्पा' बताया।

इतना हाल कह इन्दिरा क्षण-भर के लिए रुक गई और कुंअर आनन्दसिंह ने चौंककर पूछा, "क्या नाम बताया, चम्पा!"

इन्दिरा - जी हां।

आनन्द - (गौर से इन्दिरा की सूरत देखकर) ओफ, अब मैंने तुझे पहिचाना।

इन्दिरा - जरूर पहिचाना होगा, क्योंकि एक दफे आप मुझे उस खोह में देख चुके हैं जहां चम्पा ने छत से लटकते हुए आदमी की देह काटी थी, आपने उसमें बाधा डाली थी और योगिनी का वेष धरे हाथ में अंगीठी लिए चपला ने आकर आपको और देवीसिंह को बेहोश कर दिया था।

इन्द्रजीत **-** (ताज्जुब से आनन्दसिंह की तरफ देखकर) तुमने वह हाल मुझसे कहा था, जब तुम मेरी खोज में निकले थे और मुसलमानिन औरत की कैद से तुम्हें देवीसिंह ने छुड़ाया था, उस समय का हाल है।

आनन्द - जी हां, यह वही लड़की है।

इन्द्र - मगर मैंने तो सुना था कि उसका नाम सरला है!

इन्दिरा - जी हां, उस समय चम्पा ही ने मेरा नाम सरला रख दिया था।

इन्द्र - वाह-वाह, वर्षों बाद इस बात का पता लगा।

गोपाल - जरा उस किस्से को मैं भी सुना चाहता हूं।

आनन्दसिंह ने उस समय का बिल्कुल हाल राजा गोपालसिंह से कह सुनाया और इसके बाद इन्दिरा को फिर अपना हाल कहने के लिए कहा।

बयान **- 4**

भूतनाथ और असली बलभद्रसिंह तिलिस्मी खंडहर की असली इमारत वाले नम्बर दो के कमरे में उतारे गये। जीतसिंह की आज्ञानुसार पन्नालाल ने उनकी बड़ी खातिर की और सब तरह के आराम का बन्दोबस्त उनकी इच्छानुसार कर दिया। पहर रात बीतने पर जब वे लोग हर तरह से निश्चिन्त हो गए तो जीतसिंह को छोड़कर बाकी सब ऐयार जो उस खंडहर में मौजूद थे भूतनाथ से गपशप करने के लिए उसके पास आ बैठे और इधर-उधर की बातें होने लगीं। पन्नालाल ने किशोरी, कामिनी और कमला की मौत का हाल भूतनाथ से बयान किया जिसे सुनकर बलभद्रसिंह ने हद से ज्यादे अफसोस किया और भूतनाथ भी उदासी के साथ बड़ी देर तक सोच-सागर में गोते खाता रहा। जब लगभग आधी रात के जा चुकी तो सब ऐयार बिदा होकर अपने-अपने ठिकाने चले गये और भूतनाथ तथा बलभद्रसिंह भी अपनी-अपनी चारपाई पर जा बैठे। बलभद्रसिंह तो बहुत जल्द निद्रादेवी के अधीन हो गया मगर भूतनाथ की आंखों में नींद का नामनिशान न था। कमरे में एक शमादान जल रहा था और भूतनाथ अन्दर वाले कमरे की ओर निगाह किये हुए बैठा कुछ सोच रहा था।

जिस कमरे में ये दोनों आराम कर रहे थे, उसमें भीतर सहन की तरफ तीन खिड़कियां थीं। उन्हीं में से एक खिड़की की तरफ मुंह किये हुए भूतनाथ बैठा हुआ था। उसकी निगाह रमने में से होती हुई ठीक उस दालान में पहुंच रही थी जिसमें वह

तिलिस्मी चबूतरा था जिस पर पत्थर का आदमी सोया हुआ था। उस दालान में एक कन्दील जल रही थी जिसकी रोशनी में वह चबूतरा तथा पत्थर वाला आदमी साफ दिखाई दे रहा था।

भूतनाथ को उस दालान और चबूतरे की तरफ देखते हुए घण्टे भर से ज्यादा बीत गया। यकायक उसने देखा कि उस चबूतरे का बगल वाला पत्थर जो भूतनाथ की तरफ पड़ता था पूरा-का-पूरा किवाड़ के पल्ले की तरह खुलकर जमीन के साथ लग गया और उसके अन्दर किसी तरह की रोशनी मालूम पड़ने लगी जो धीरे-धीरे तेज होती जाती थी।

भूतनाथ को यह मालूम था कि वह चबूतरा किसी तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और उस तिलिस्म को राजा वीरेन्द्रसिंह के दोनों लड़के तोड़ेंगे, अस्तु उस समय उस चबूतरे की ऐसी अवस्था देख उसको बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वह आंखें मल-मलकर उस तरफ देखने लगा। थोड़ी देर बाद चबूतरे के अन्दर से एक आदमी निकलता हुआ दिखाई पड़ा मगर यह निश्चय नहीं हो सका कि वह मर्द है या औरत क्योंकि वह एक स्याह लबादा सिर से पैर तक ओढ़े हुए था और उसके बदन का कोई भी हिस्सा दिखाई नहीं देता था। उसके बाहर निकलने के साथ ही चबूतरे के अन्दर वाली रोशनी बन्द हो गई मगर वह पत्थर जो हटकर जमीन के साथ लग गया था ज्यों-का-त्यों खुला ही रहा। वह आदमी बाहर निकलकर इधर-उधर देखने लगा और थोड़ी देर तक कुछ सोचने के बाद बाहर रमने में आ गया। धीरे-धीरे चलकर उसने एक दफे चारों तरफ का चक्कर लगाया। चक्कर लगाते समय वह कई दफे भूतनाथ की निगाह की ओट हुआ, मगर भूतनाथ ने उठकर उसे देखने का उद्योग इसलिए नहीं किया कि कहीं उसकी निगाह मुझ पर न पड़ जाय। जिस कमरे में भूतनाथ सोया था वह एक मंजिल ऊपर था और वहां से रमना तथा दालान साफ-साफ दिखाई दे रहा था।

वह आदमी घूम-फिरकर पुनः उसी तिलिस्मी चबूतरे के पास जा खड़ा हुआ और कुछ दम लेकर चबूतरे के अन्दर घुस गया, मगर थोड़ी देर बाद पुनः वह चबूतरे के बाहर निकला। अबकी दफे वह अकेला न था बल्कि उसी ढंग का लबादा ओढ़े चार आदमी और भी उसके साथ थे अर्थात् पांच आदमी चबूतरे के बाहर निकले और पूरब तरफ वाले कोने में जाकर सीढ़ियों की राह ऊपर की मंजिल पर गये। ऊपर की मंजिल में चारों तरफ इमारत बनी हुई थी इसलिए भूतनाथ को यह न जान पड़ा कि वे लोग किधर गये या किस कोठरी में घुसे मगर इस बात का शक जरूर हो गया कि कहीं वे लोग कोठरी ही कोठरी में घूमते हुए हमारे कमरे में न आ जायें अस्तु उसने एक

महीन चादर मुंह पर ओढ़ ली और इस ढंग से लेट गया कि दरवाजा तथा तिलिस्मी चबूतरा इन दोनों की तरफ जिधर चाहे बिना सिर हिलाये देख सके। आधे घण्टे के बाद भूतनाथ के कमरे का दरवाजा खुला और उन्हीं पांचों में से एक आदमी ने कमरे के अन्दर झांककर देखा। जब उसे मालूम हो गया कि दोनों आदमी बेखबर सो रहे हैं, तो वह धीरे से कमरे के अन्दर चला आया और उसके बाद बाकी के चारों आदमी भी कमरे में चले आये। पांचों आदमी (या जो हों) एक ही रंग-ढंग का लबादा या बुर्का ओढ़े हुए थे, केवल आंख की जगह जाली बनी हुई थी जिससे देखने में किसी तरह की अण्डस न पड़े। उन पांचों ने बड़े गौर से बलभद्रसिंह की सूरत देखी और एक ने कागज का एक लिफाफा उसके सिरहाने की तरफ रख दिया, फिर भूतनाथ के पास आया और उसके सिरहाने भी एक लिफाफा रखकर अपने साथियों के पास चला गया। कई क्षण और ठहरकर ये पांचों आदमी कमरे के बाहर निकल गये और दरवाजे को भी उसी तरह घुमा दिया जैसा पहिले था। उसी समय भूतनाथ भी उन पांचों में से किसी को पकड़ लेने की नीयत से चारपाई पर से उठ खड़ा हुआ और कमरे के बाहर निकला मगर कोई दिखाई न पड़ा। उसी जगह नीचे उतर जाने के लिए सीढ़ियां थीं, भूतनाथ ने समझा कि ये लोग इन्हीं सीढ़ियों की राह नीचे उतर गए होंगे, अस्तु वह भी शीघ्रता के साथ नीचे उतर गया और घूमता हुआ बीच वाले रमने में पहुंचा मगर उन पांचों में से कोई भी दिखाई न दिया। भूतनाथ ने सोचा कि आखिर वे लोग घूम-फिरकर उसी तिलिस्मी चबूतरे के पास पहुंचेंगे इसलिए पहिले ही वहां चलकर छिप रहना चाहिए। वह अपने को छिपाता हुआ उस तिलिस्मी चबूतरे के पास जा पहुंचा, और पीछे की तरफ जाकर इसकी आड़ में छिपकर बैठ गया।

भूतनाथ को आड़ में छिपकर बैठे हुए आधे घण्टे से ज्यादा बीत गया मगर किसी की सूरत दिखाई न पड़ी, तब वह उठकर चबूतरे के सामने की तरफ आया जिधर का मुंह खुला हुआ था। वह पत्थर का तख्ता जो हटकर जमीन के साथ लग गया था अभी तक खुला हुआ था। भूतनाथ ने उसके अन्दर की तरफ झांककर देखा मगर अन्धकार के सबब से कुछ दिखाई न पड़ा, हां, उसके अन्दर से कुछ बारीक आवाज जरूर आ रही थी जिसे समझना कठिन था। भूतनाथ पीछे की तरफ हट गया और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए, इतने ही में अन्दर की तरफ से कुछ खड़खड़ाहट की आवाज आई और वह पत्थर का तख्ता हिलने लगा जो चबूतरे के पल्ले की तरह अलग हो गया था। भूतनाथ उसके पास से हट गया और वह पल्ला चबूतरे के साथ धीरे से लगकर ज्यों-का-त्यों हो गया। उस समय भूतनाथ यह कहता हुआ वहां से रवाना हुआ, "मालूम होता है वे लोग किसी दूसरी राह से इसके अन्दर पहुंच गये!"

भूतनाथ घूमता हुआ फिर अपने कमरे में चला आया और अपनी चारपाई पर से उस लिफाफे को उठा लिया जो उन लोगों में से एक ने उसके सिरहाने रख दिया था। शमादान के पास जाकर लिफाफा खोला और उसके अन्दर से खत निकालकर पढ़ने लगा, यह लिखा हुआ था -

"कल बारह बजे रात को इसी कमरे में मेरा इन्तजार करो और जागते रहो।"

भूतनाथ ने दो-तीन दफे उस लेख को पढ़ा और फिर लिफाफे में रखकर कमर में खोंस लिया, उसके बाद बलभद्रसिंह की चारपाई के पास गया और चाहा कि उनके सिरहाने जो पत्र रक्खा गया है, उसे भी उठाकर पढ़े मगर उसी समय बलभद्रसिंह की आंख खुल गई और चारपाई पर किसी को झुके हुए देख वह उठ बैठा। भूतनाथ पर निगाह पड़ने से वह ताज्जुब में आकर बोला, "क्या मामला है?'

भूत - इस समय एक ताज्जुब की बात देखने में आई है।

बलभद्र - वह क्या?

भूत - तुम जरा सावधान हो जाओ और मुझे अपने पास बैठने दो तो कहूं -

बलभद्र **-** (भूतनाथ के लिए अपनी चारपाई पर जगह करके) आओ और कहो कि क्या मामला है?

भूतनाथ बलभद्रसिंह की चारपाई पर बैठ गया और उसने जो कुछ देखा था पूरा-पूरा बयान किया तथा अन्त में कहा कि "पढ़ने के लिए मैं तुम्हारे सिरहाने से चीठी उठाने लगा कि तुम्हारी आंख खुल गई, अब तुम खुद इस चीठी को पढ़ो तो मालूम हो कि क्या लिखा है।"

बलभद्रसिंह लिफाफा उठा शमादान के पास चला गया और अपने हाथ से लिफाफा खोला। उसके अन्दर एक अंगूठी थी जिस पर निगाह पड़ते ही वह चिल्ला उठा और बिना कुछ कहे अपनी चारपाई पर जाकर बैठ गया।

बयान **- 5**

कुमार की आज्ञानुसार इन्दिरा ने पुनः अपना किस्सा कहना शुरू किया -

इन्दिरा - चम्पा ने मुझे दिलासा देकर बहुत कुछ समझाया और मेरी मदद करने का वादा किया और यह भी कहा कि आज से तू अपना नाम बदल दे। मैं तुझे अपने घर

ले चलती हूं मगर इस बात का खूब ध्यान रखियो कि यदि कोई तुझसे तेरा नाम पूछे तो 'सरला' बताइयो और यह सब हाल जो तूने मुझसे कहा है अब और किसी से बयान न कीजियो। मैंने चम्पा की बात कबूल कर ली और वह मुझे अपने साथ चुनारगढ़ ले गई। वहां पहुंचने पर जब मुझे चम्पा की इज्जत और मर्तबे का हाल मालूम हुआ तो मैं अपने दिल में बहुत खुश हुई और विश्वास हो गया कि वहां रहने में मुझे किसी तरह का डर नहीं है और इनकी मेहरबानी से अपने दुश्मनों से बदला ले सकूंगी।

चम्पा ने मुझे हिफाजत और आराम से अपने यहां रक्खा और मेरा सच्चा हाल अपनी प्यारी सखी चपला के सिवाय और किसी से भी न कहा। निःसन्देह उसने मुझे अपनी लड़की के समान रक्खा और ऐयारी की विद्या भी दिल लगाकर सिखलाने लगी, मगर अफसोस, किस्मत ने मुझे बहुत दिनों तक उसके पास रहने न दिया और थोड़े ही जमाने के बाद (इन्द्रजीतसिंह की तरफ इशारा करके) आपको गया की रानी माधवी ने धोखा देकर गिरफ्तार कर लिया। चम्पा और चपला आपकी खोज में निकलीं, मुझे भी उनके साथ जाना पड़ा और उसी जमाने में मेरा और चम्पा का साथ छूटा।

आनन्द - तुम्हें यह कैसे मालूम हुआ कि भैया को माधवी ने गिरफ्तार कराया था?

इन्दिरा - माधवी के दो आदमियों को चम्पा और चपला ने अपने काबू में कर लिया, पहिले छिपकर उन दोनों की बातें सुनीं जिससे विश्वास हो गया कि दोनों माधवी के नौकर हैं और कुंअर साहब को गिरफ्तार कर लेने में दोनों शरीक थे, मगर यह समझ में न आया कि जिसके ये लोग नौकर हैं वह माधवी कौन है और कुंअर साहब को ले जाकर उसने कहां रक्खा है। लाचार चम्पा ने धोखा देकर उन लोगों को अपने काबू में किया और कुंअर साहब का हाल उनसे पूछा। मैंने उन दोनों के ऐसा जिद्दी आदमी कोई भी न देखा होगा। आपने स्वयं देखा था कि चम्पा ने उस खोह में उसे कितना दुःख देकर मारा मगर उस कम्बख्त ने ठीक-ठीक पता नहीं दिया। उस समय वहां चम्पा का नौकर भी हबशी के रूप में काम कर रहा था, आपको याद होगा।

आनन्द - वह माधवी ही का आदमी था?

इन्दिरा - जी हां, और उसकी बातों का आपने दूसरा ही मतलब लगा लिया था।

आनन्द - ठीक है, अच्छा फिर उस दूसरे आदमी की क्या दशा हुई, क्योंकि चम्पा ने तो दो आदमियों को पकड़ा था?

इन्दिरा - वह दूसरा आदमी भी चम्पा के हाथ से उसी रात उसके थोड़ी देर पहिले मारा गया था।

आनन्द - हां ठीक है, उसके थोड़ी देर पहिले चम्पा ने एक और आदमी को मारा था। जरूर यह वही होगा जिसके मुंह से निकले हुए टूटे-फूटे शब्दों ने हमें धोखे में डाल दिया था। अच्छा उसके बाद क्या हुआ तुम्हारा साथ उनसे कैसे छूटा?

इन्दिरा - चम्पा और चपला जब वहां से जाने लगीं तो ऐयारी का बहुत कुछ सामान और खाने - पीने की चीजें उसी खोह में रखकर मुझसे कह गईं कि जब तक हम दोनों या दोनों में से कोई एक लौटकर न आवे तब तक तू इसी जगह रहियो इत्यादि, मगर मुझे बहुत दिनों तक उन दोनों का इन्तजार करना पड़ा यहां तक कि जी ऊब गया और मैं ऐयारी का कुछ सामान लेकर उस खोह से बाहर निकली क्योंकि चम्पा की बदौलत मुझे कुछ-कुछ ऐयारी भी आ गई थी। जब मैं उस पहाड़ और जंगल को पार करके मैदान में पहुंची तो सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिए, क्योंकि बहुत-सी बंधी हुई उम्मीदों का उस समय खून हो रहा था और अपनी मां की चिन्ता के कारण मैं बहुत दुःखी हो रही थी। यकायक मेरी निगाह एक ऐसी चीज पर पड़ी जिसने मुझे चौंका दिया और मैं घबड़ाकर उस तरफ देखने लगी...।

इन्दिरा और कुछ कहा ही चाहती थी कि यकायक जमीन के अन्दर से बड़े जोर-शोर के साथ घड़घड़ाहट की आवाज आने लगी जिसने सभों को चौंका दिया और इन्दिरा घबड़ाकर राजा गोपालसिंह का मुंह देखने लगी। सबेरा हो चुका था और पूरब तरफ से उदय होने वाले सूर्य की लालिमा ने आसमान का कुछ भाग अपनी बारीक चादर के नीचे ढांक लिया था।

गोपाल - (कुमार से) अब आप दोनों भाइयों का यहां ठहरना उचित नहीं जान पड़ता, यह आवाज जो जमीन के नीचे से आ रही है निःसन्देह तिलिस्मी कल-पुरजों के हिलने या घूमने के सबब से है। एक तौर पर आप तिलिस्म तोड़ने में हाथ लगा चुके हैं अस्तु अब इस काम में रुकावट नहीं हो सकती। इस आवाज को सुनकर आपके दिल में भी यही खयाल पैदा हुआ होगा, अस्तु अब आप क्षणभर भी विलम्ब न कीजिए।

कुमार - बेशक ऐसी ही बात है, आप भी यहां से शीघ्र चले जाइये, मगर इन्दिरा का क्या होगा?

गोपाल - इन्दिरा को इस समय मैं अपने साथ ले जाता हूं फिर जो कुछ होगा देखा जायगा।

कुमार - अफसोस कि इन्दिरा का कुल हाल सुन न सके, खैर लाचारी है।

गोपाल - कोई चिन्ता नहीं, आप तिलिस्म का काम तमाम करके इसकी मां को छुड़ाएं फिर सब हाल सुन लीजिएगा। हां, आपसे वादा किया था कि अपनी तिलिस्मी किताब आपको पढ़ने के लिए दूंगा मगर वह किताब गायब हो गई थी इसलिए दे न सका था, अब (किताब दिखाकर) इन्दिरा के साथ ही यह किताब भी मुझे मिल गई है, इसे पढ़ने के लिए मैं आपको दे सकता हूं, यदि आप इसे अपने साथ ले जाना चाहें तो ले जायें।

इन्द्रजीत - समय की लाचारी इस समय हम लोगों को आपसे जुदा करती है, और यह निश्चय नहीं हो सकता है कि पुनः कब आपसे मुलाकात होगी और यह किताब हम लोग ले जायेंगे तो कब वापस करने की नौबत आयगी। तिलिस्मी किताब जो मेरे पास है उसके पढ़ने और बाजे की आवाज के सुनने से मुझे विश्वास होता है कि आपकी किताब पढ़े बिना भी हम लोग तिलिस्म तोड़ सकेंगे। यदि मेरा यह खयाल ठीक है तो आपके पास से यह किताब ले जाकर आपका बहुत बड़ा हर्ज करना समयानुकूल न होगा।

गोपाल - ठीक है, इस किताब के बिना आपका कोई खास हर्ज नहीं हो सकता और इसमें कोई शक नहीं कि इसके बिना मैं बे-हाथ-पैर का हो जाऊंगा।

इन्द्रजीत - तो इस किताब को आप अपने पास ही रहने दीजिए, फिर जब मुलाकात होगी देखा जायगा, अब हम लोग बिदा होते हैं।

गोपाल - खैर जाइए, हम आप दोनों भाइयों को दयानिधि ईश्वर के सुपुर्द करते हैं।

इसके बाद राजा गोपालसिंह ने जल्दी-जल्दी कुछ बातें दोनों कुमारों को समझाकर बिदा किया और आप भी इन्दिरा को साथ ले महल की तरफ रवाना हो गए।

बयान **- 6**

जिस राह से कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को राजा गोपालसिंह इस बाग में लाये थे उसी राह से जाकर ये दोनों भाई उस कमरे में पहुंचे जो कि बाजे वाले कमरे में जाने के पहिले पड़ता था और जिसमें महराबदार चार खम्भों के सहारे एक बनावटी

आदमी फांसी लटक रहा था। इस कमरे का खुलासा हाल एक दफे लिखा जा चुका है इसलिए यहां पुनः लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती। पाठकों को यह भी याद होगा कि इन्दिरा का किस्सा सुनने के पहिले ही कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह उस तिलिस्मी बाजे की आवाज ताली देकर अच्छी तरह सुन-समझ चुके हैं। यदि याद न हो तो तिलिस्म सम्बन्धी पिछला किस्सा पुनः पढ़ जाना चाहिए क्योंकि अब ये दोनों भाई तिलिस्म तोड़ने में हाथ लगाते हैं।

कमरे में पहुंचने के बाद दोनों भाइयों ने देखा कि फांसी लटकते हुए आदमी के नीचे जो मूरत (इन्दिरा के ढंग की) खड़ी थी वह इस समय तेजी के साथ नाच रही है। कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर का एक वार करके उस मूरत को दो टुकड़े कर दिया, अर्थात् कमर से ऊपर वाला हिस्सा काटकर गिरा दिया। उसी समय उस मूरत का नाचना बन्द हो गया और वह भयानक आवाज भी जो बड़ी देर से तमाम बाग में और इस कमरे में भी गूंज रही थी एकदम बन्द हो गई। इसके बाद दोनों भाइयों ने उस बची हुई आधी मूरत को भी जोर करके जमीन से उखाड़ डाला। उस समय मालूम हुआ कि उसके दाहिने पैर के तलवे में लोहे की जंजीर जड़ी है, इसके खींचने से दाहिनी तरफ वाली दीवार में एक नया दरवाजा निकल आया।

तिलिस्मी खंजर की रोशनी के सहारे दोनों भाई उस दरवाजे के अन्दर चले गए और थोड़ी दूर जाने के बाद और एक खुला हुआ दरवाजा लांघकर एक छोटी-सी कोठरी में पहुंचे जिसके ऊपर चढ़ जाने के लिए दस-बारह सीढ़ियां बनी हुई थीं। दोनों भाई सीढ़ियों पर चढ़कर ऊपर के कमरे में पहुंचे जिसकी लम्बाई पचास हाथ और चौड़ाई चालीस हाथ से कम न होगी। यह कमरा काहे को था, एक छोटा-सा बनावटी बागीचा मन मोहने वाला था। यद्यपि इसमें फूल-बूटों के जितने पेड़ लगे हुए थे सब बनावटी थे मगर फिर भी जान पड़ता था कि फूलों की खुशबू से वह कमरा अच्छी तरह बसा हुआ है। इस कमरे की छत में बहुत मोटे-मोटे शीशे लगे हुए थे जिनमें से बे रोक-टोक पहुंचने वाली रोशनी के कारण कमरे भर में उजाला हो रहा था। वे शीशे चौड़े या चपटे न थे बल्कि गोल गुम्बज की तरह बने हुए थे।

इस छोटे बनावटी बागीचे में छोटी-छोटी मगर बहुत खूबसूरत क्यारियां बनी हुई थीं और उन क्यारियों के चारों तरफ की जमीन पत्थर के छोटे-छोटे रंग-बिरंगे टुकड़ों से बनी हुई थी। बीच में एक गोलाम्बर (चबूतरा) बना हुआ था उसके ऊपर एक औरत खड़ी हुई मालूम पड़ती थी जिसके बाएं हाथ में एक तलवार और दाहिने में हाथ-भर लम्बी एक ताली थी।

कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर की रोशनी बन्द करके आनन्दसिंह की तरफ देखा और कहा, "यह औरत निःसन्देह लोहे या पीतल की बनी हुई होगी और यह ताली भी वही होगी जिसकी हम लोगों को जरूरत है, मगर तिलिस्मी बाजे ने तो यह कहा था कि 'ताली किसी चलती-फिरती से प्राप्त करोगे', यह औरत तो चलती-फिरती नहीं है, खड़ी है!"

आनन्द - उसके पास तो चलिए, देखें वह ताली कैसी है।

इन्द्रजीत - चलो।

दोनों भाई उस गोलाम्बर की तरफ बढ़े मगर उसके पास न जा सके। तीन-चार हाथ इधर ही थे कि एक प्रकार की आवाज के साथ वहां की जमीन हिली और गोलाम्बर (जिस पर पुतली थी) तेजी से चक्कर खाने लगा और उसी के साथ वह नकली औरत (पुतली) भी घूमने लगी जिसके हाथ में तलवार और ताली थी। घूमने के समय उसका ताली वाला हाथ ऊंचा हो गया और तलवार वाला हाथा आगे की तरफ बढ़ गया जो उसके चक्कर की तेजी में चक्र का काम कर रहा था।

आनन्द - कहिए भाईजी, अब यह औरत या पुतली चलती-फिरती हो गई या नहीं?

इन्द्रजीत - हां, हो तो गई।

आनन्द - अब जिस तरह हो सके इसके हाथ से ताली ले लेनी चाहिए, गोलाम्बर पर जाने वाला तो तुरन्त दो टुकड़े हो जायगा।

इन्द्रजीत **-** (पीछे हटते हुए) देखें हट जाने पर इसका घूमना बन्द होता है या नहीं।

आनन्द **-** (पीछे हटकर) देखिये गोलाम्बर का घूमना बन्द हो गया! बस यही काला पत्थर चार हाथ के लगभग चौड़ा जो इस गोलाम्बर के चारों तरफ लगा है असल करामात है, इस पर पैर रखने ही से गोलाम्बर घूमने लगाता है। (काले पत्थर के ऊपर जाकर) देखिये घूमने लग गया। (हटकर) अब बन्द हो गया। अब समझ गया, इस पुतली के हाथ से ताली और तलवार ले लेना कोई बड़ी बात नहीं।

इतना कहकर आनन्दसिंह ने एक छलांग मारी और काले पत्थर पर पैर रक्खे बिना ही कूदकर गोलाम्बर के ऊपर चले गये। गोलाम्बर ज्यों-का-त्यों अपने ठिकाने जमा रहा और आनन्दसिंह पुतली के हाथ से ताली तथा तलवार लेकर जिस तरह वहां गए

थे उसी तरह कूदकर अपने भाई के पास चले आये और बोले - "कहिये क्या मजे में ताली ले आए!"

इन्द्रजीत - बेशक! (ताली हाथ में लेकर) यह अजब ढंग की बनी हुई है। (गौर से देखकर) इस पर कुछ अक्षर भी खुदे मालूम पड़ते हैं। मगर बिना तेज रोशनी के इनका पढ़ा जाना मुश्किल है!

आनन्द - मैं तिलिस्मी खंजर की रोशनी करता हूं, आप पढ़िये।

इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खजर की रोशनी में उसे पढ़ा और आनन्दसिंह को समझाया, इसके बाद दोनों भाई कूदकर उस गोलाम्बर पर चले गये जिस पर हाथ में ताली लिए हुए वह पुतली खड़ी थी। ढूंढ़ने और गौर से देखने पर दोनों भाइयों को मालूम हुआ कि उसी पुतली के दाहिने पर में एक छेद ऐसा है जिसमें वह तलवार जो पुतली के हाथ से ली गई थी बखूबी घुस जाय। भाई की आज्ञानुसार आनन्दसिंह ने वही पुतली वाली तलवार उस छेद में डाल दी, यहां तक कि पूरी तलवार छेद के अन्दर चली गई और केवल उसका कब्जा बाहर रह गया। उस समय दोनों भाइयों ने मजबूती के साथ उस पुतली को पकड़ लिया। थोड़ी देर बाद गोलाम्बर के नीचे आवाज आई और पहिले की तरह पुनः वह गोलाम्बर पुतली सहित घूमने लगा। पहिले धीरे-धीरे मगर फिर क्रमशः तेजी के साथ वह गोलाम्बर घूमने लगा। उस समय दोनों भाइयों के हाथ उस पुतली के साथ ऐसे चिपक गये कि मालूम होता था छुड़ाने से भी नहीं छुटेंगे। वह गोलाम्बर घूमता हुआ जमीन के अन्दर धंसने लगा और सिर में चक्कर आने के कारण दोनों भाई बेहोश हो गए।

जब वे होश में आये तो आंखें खोलकर चारों तरफ देखने लगे मगर अन्धकार के सिवाय और कुछ भी दिखाई न दिया, उस समय इन्द्रजीतसिंह ने अपने तिलिस्मी खंजर के जरिये से रोशनी की और इधर-उधर देखने लगे। अपने छोटे भाई को पास ही में बैठे पाया और उस पुतली को भी टुकड़े-टुकड़े भई उसी जगह देखा जिसके टुकड़े कुछ गोलाम्बर के ऊपर और कुछ जमीन पर छितराये हुए थे।

इस समय भी दोनों भाइयों ने अपने को उसी गोलाम्बर पर पाया और इससे समझे कि यह गोलाम्बर ही धंसता हुआ इस नीचे वाली जमीन के साथ आ लगा है, मगर जब छत की तरफ निगाह की तो किसी तरह का निशान या छेद न देखकर छत को बराबर और बिल्कुल साफ पाया। अब जहां पर दोनों भाई थे वह कोठरी बनिस्बत ऊपर वाले (या पहिले) कमरे के बहुत छोटी थी। चारों तरफ तरह-तरह के कल-पुर्जे

दिखाई दे रहे थे जिनमें से निकलकर फैले हुए लोहे के तार और लोहे की जंजीरें जाल की तरह बिल्कुल कोठरी को घेरे हुए थीं। बहुत-सी जंजीरें ऐसी थीं जो छत में, बहुत-सी दीवार में, और बहुत-सी जमीन के अन्दर घुसी हुई थीं। इन्द्रजीतसिंह के सामने की तरफ एक छोटा-सा दरवाजा था जिसके अन्दर दोनों कुमारों को जाना पड़ता अस्तु दोनों कुमार गोलाम्बर के नीचे उतरे और तारों तथा जंजीरों से बचते हुए उस दरवाजे के अन्दर गये। वह रास्ता एक सुरंग की तरह था जिसकी छत, जमीन और दोनों तरफ की दीवारें मजबूत पत्थर की बनी हुई थीं। दोनों कुमार थोड़ी दूर तक उसमें बराबर चलते गये और इसके बाद एक ऐसी जगह पहुंचे जहां ऊपर की तरफ निगाह करने से आसमान दिखाई देता था। गौर करने से दोनों कुमारों को मालूम हुआ कि यह स्थान वास्तव में कुएं की तरह है। इसकी जमीन (किसी कारण से) बहुत ही नरम और गुदगुदी थी। बीच में एक पतला लोहे का खंभा था और खंभे के नीचे जंजीर के सहारे एक खटोली बंधी हुई थी जिस पर दो-तीन आदमी बैठ सकते थे। खटोली से अढ़ाई-तीन हाथ ऊंचे (खंभे में) में चर्खी लगी हुई थी और चर्खी के साथ एक ताम्रपत्र बंधा हुआ था। इन्द्रजीतसिंह ने ताम्रपत्र को पढ़ा, बारीक-बारीक हरफों में यह लिखा था -

"यहां से बाहर निकल जाने वाले को खटोली के ऊपर बैठकर यह चर्खी सीधी घुमानी चाहिए। चर्खी सीधी तरफ घुमाने से यह खंभा खटोली को लिये हुए ऊपर जायगा और उल्टी तरफ घुमाने से यह नीचे उतरेगा। पीछे हटने वाले को अब वह रास्ता खुला नहीं मिलेगाचंद्रकांता संतति सोलहवां भाग जिधर से वह आया होगा।"

पत्र पढ़कर इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "यहां से बाहर निकल चलने के लिए यह बहुत अच्छी तर्कीब है, अब हम दोनों को भी इसी तरह बाहर हो जाना चाहिए। लो तुम भी इसे पढ़ लो।"

आनन्द **-** (पत्र पढ़कर) आइये इस खटोली में बैठ जाइये।

दोनों कुमार उस खटोली में बैठ गये और इन्द्रजीतसिंह चर्खी घुमाने लगे। जैसे-जैसे चर्खी घुमाते थे वैसे-वैसे वह खंभा खटोली को लिये हुए ऊपर की तरफ उठता जाता था। जब खंभा कुएं के बाहर निकल आया तब अपने चारों तरफ की जमीन और इमारतों को देखकर दोनों कुमार चौंके और इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखकर आनन्दसिंह ने कहा -

आनन्द - यह तो तिलिस्मी बाग का वही चौथा दर्जा है जिसमें हम लोग कई दिन तक रह चुके हैं!

इन्द्रजीत - बेशक वही है, मगर यह खंभा हम लोगों को (हाथ का इशारा करके) उस तिलिस्मी इमारत तक पहुंचावेगा।

पाठक, हम सन्तति के नौवें भाग के पहिले बयान में इस बाग के चौथे दर्जे का हाल जो कुछ लिख चुके हैं शायद आपको याद होगा, यदि भूल गये हों तो उसे पुनः पढ़ जाइए। उस बयान में यह भी लिखा जा चुका है कि इस बाग के पूरब तरफ वाले मकान के चारों तरफ पीतल की दीवार थी इसलिये उस मकान का केवल ऊपर वाला हिस्सा दिखाई देता था और कुछ मालूम नहीं होता था कि उसके अन्दर क्या है। हां, छत के ऊपर लोहे का एक पतला महराबदार खंभा था जिसका दूसरा सिरा उसके पास वाले कुएं के अन्दर गया था। उस मकान के चारों तरफ पीतल की जो दीवार थी उसमें एक बन्द दरवाजा भी दिखाई देता था और उसके दोनों तरफ पीतल के दो आदमी हाथ में नंगी तलवार लिए खड़े थे, इत्यादि।

यह उसी मकान के साथ वाला कुआं था जिसमें से इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह निकले थे। धीरे-धीरे ऊंचे होकर दोनों भाई उस मकान की छत पर जा पहुंचे जिसके चारों तरफ पीतल की दीवार थी। खटोली को मकान की छत पर पहुंचाकर वह खंभा अड़ गया और दोनों कुमारों को उस पर से उतर जाना पड़ा। पहिले जब दोनों कुमार इस बाग के (चौथे दर्जे के) अन्दर आये थे, तब इस मकान के अन्दर का हाल कुछ जान नहीं सके थे मगर अब तो इत्तिफाक ने खुद ही इन दोनों को उस मकान में पहुंचा दिया इसलिए बड़े उत्साह से दोनों भाई इस जगह का तमाशा देखने के लिए तैयार हो गये।

इस मकान की छत पर एक रास्ता नीचे उतर जाने के लिए था; उसी राह से दोनों भाई नीचे वाली मंजिल में उतरकर एक छोटे से कमरे में पहुंचे जहां की छत, जमीन और चारों तरफ की दीवारों में कलई किये हुए दलदार शीशे बड़ी कारीगरी से जड़े हुए थे। अगर एक आदमी भी उस कमरे में जाकर खड़ा हो तो अपनी हजारों सूरतें1 देखकर घबड़ा जाय। सिवाय इस बात के उस कमरे में और कुछ भी न था और न यही मालूम होता था कि यहां से किसी और जगह जाने के लिए कोई रास्ता है। उस कमरे की अवस्था देखकर इन्द्रजीतसिंह हंसे और आनन्दसिंह की तरफ देखकर बोले -

इन्द्रजीत - इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस कमरे में इन शीशों की बदौलत एक प्रकार की दिल्लगी है, मगर आश्चर्य इस बात का होता है कि तिलिस्म बनाने वालों ने यह फजूल कार्रवाई क्यों की है! इन शीशों के लगाने से कोई फायदा या नतीजा तो मालूम नहीं होता!

आनन्द - मैं भी यही सोच रहा हूं मगर विश्वास नहीं होता कि तिलिस्म बनाने वालों ने इसे व्यर्थ ही बनाया होगा, कोई-न-कोई बात इसमें जरूर होगी। इस मकान में इसके सिवाय अभी तक कोई दूसरी अनूठी बात दिखाई नहीं दी, अगर यहां कुछ है तो केवल यही एक कमरा है, अस्तु इस कमरे को फजूल समझना इस इमारत-भर को फजूल समझना होगा, मगर ऐसा हो नहीं सकता। देखिये इसी मकान से उस लोहे वाले खम्भे का सम्बन्ध है जिसकी बदौलत हम... (रुककर) सुनिये, सुनिये, यह आवाज कैसी और कहां से आ रही है?

बात करते-करते आनन्दसिंह रुक गये और ताज्जुब भरी निगाहों से अपने भाई की तरफ देखने लगे क्योंकि उन्हें दो आदमियों के जोर-जोर से बातचीत करने की आवाज सुनाई देने लगी। वह आवाज यह थी -

एक - तो क्या दोनों कुमार उस कुएं से निकलकर यहां आ जायंगे!

दूसरा - हां जरूर आ जायंगे। उस कुएं में जो लोहे का खम्भा गया हुआ है उसमें एक खटोली बंधी है, उस खटोली पर बैठकर एक कल घुमाते हुए दोनों आदमी यहां आ जायेंगे।

1. यदि दो बड़े शीशे आमने-सामने रखकर देखिये तो शीशों में दो-चार ही नहीं बल्कि हजारों शीशे एक-दूसरे के अन्दर दिखाई देंगे।

पहिला - तब तो बड़ी मुश्किल होगी, हम लोगों को यह जगह छोड़ देनी पड़ेगी।

दूसरा - हम लोग इस जगह को क्यों छोड़ने लगे जिसके भरोसे पर हम लोग यहां बैठे हैं क्या वह दोनों राजकुमारों से कमजोर है खैर उसे जाने दो, पहिले तो हमीं लोग उन्हें तंग करने के लिए बहुत हैं।

पहिला - इसमें तो कोई शक नहीं कि हम लोग उनकी ताकत और जवांमर्दी को हवा खिला सकते हैं, मगर एक काम जरूर करना चाहिए।

दूसरा - वह क्या?

पहिला - इस कमरे का दरवाजा खोल देना चाहिए जिसमें भयानक अजगर रहता है, जब दोनों उसे खुला देख उसके अन्दर जायंगे तो निःसन्देह वह अजगर उन दोनों को निगल जायेगा।

दूसरा - और बाकी के दरवाजे मजबूती के साथ बन्द कर देना चाहिए जिससे वे और किसी तरफ जा न सकें।

पहिला - बेशक, इसके अतिरिक्त एक काम और भी करना चाहिए जिससे वे दोनों उस दरवाजे के अन्दर जरूर जायें अर्थात् उन दोनों लड़कियों को भी उस अजगर वाली कोठरी में हाथ-पैर बांधकर पहुंचा देना चाहिए, जिन पर दोनों कुमार आशिक हैं।

दूसरा - यह तुमने बहुत अच्छी बात कही। जब वह अजगर उन लड़कियों को निगलना चाहेगा तो वे जरूर चिल्लायेंगी, उस समय आवाज पहिचानने पर वे दोनों अपने को किसी तरह रोक न सकेंगे और उस दरवाजे के अन्दर जाकर अजगर की खुराक बनेंगे।

पहिला - यह भी अच्छी बात कही। अच्छा उन दोनों को पकड़ लाओ और हाथ-पैर बांधकर उस कोठरी में डाल दो, अगर इस कार्रवाई से काम न चलेगा तो दूसरी कार्रवाई की जायेगी मगर उन्हें इस मकान के बाहर न जाने देंगे।

इसके बाद वह बातचीत की आवाज बन्द हो गई और यकायक सामने वाले आईने में कुंअर इन्दजीतसिंह और आनन्दसिंह ने अपने प्यारे ऐयार भैरोसिंह और तारासिंह की सूरत देखी, सो भी इस ढंग से दोनों ऐयार अकड़ते हुए एक तरफ से आये और दूसरी तरफ को चले गये। इसके बाद दो औरतों की सूरत नजर आईं। पहिले तो पहिचानने में कुछ शक हुआ मगर तुरन्त ही मालूम हो गया कि वे दोनों कमलिनी और लाडिली हैं। उन दोनों की कमर में लोहे की जंजीरें बंधी हुई थीं और एक मजबूत आदमी उन्हें अपने हाथ में लिये हुए उन दोनों के पीछे-पीछे जा रहा था। यह भी देखा कि कमलिनी और लाडिली चलते-चलते रुकीं और उसी समय पिछले आदमी ने उन दोनों को धक्का दिया जिससे वे झुक गईं और सिर हिलाकर आगे बढ़ती हुई नजरों से ओट हो गईं।

भैरोसिंह और तारासिंह यहां कैसे आ पहुंचे और कमलिनी तथा लाडिली को कैदियों की तरह ले जाने वाला वह कौन था इस शीशे के अन्दर उन सभों की सूरत कैसे

दिखाई पड़ी चारों तरफ से बन्द रहने पर भी यहां आवाज कैसे आई, इन बातों को सोचते हुए दोनों कुमार बहुत ही दुःखी हुए।

आनन्द - भैया, यह तो बड़े आश्चर्य की बात मालूम पड़ती है। यह लोग (अगर वास्तव में कोई हों तो) कहते हैं कि अजगर कुमारों को निगल जायेगा। मगर हम लोग तो खुद ही अजगर के मुंह में जाने के लिए तैयार हैं क्योंकि तिलिस्मी बाजे की यही आज्ञा है। अब कहिए तिलिस्मी बाजे की बात झूठी है या वे लोग कोई धोखा देना चाहते हैं

इन्द्रजीत - मैं भी इन्हीं बातों को सोच रहा हूं। तिलिस्मी बाजे की आवाज को झूठा समझना तो बुद्धिमानी की बात नहीं होगी क्योंकि उसी आवाज के भरोसे पर हम लोग तिलिस्म तोड़ने के लिए तैयार हुए हैं, मगर हां, इस बात का पता लगाए बिना अजदहे के मुंह में जाने की इच्छा नहीं होती कि यह आवाज आखिर थी कैसी और इस आईने में जिन लोगों के बातचीत की आवाज सुनाई दी है वे वास्तव में कोई हैं भी या सब बिल्कुल तिलिस्मी खेल ही है कलई किए हुये आईने में किसी ऐसे आदमी की सूरत भला क्योंकर दिखाई दे सकती है जो उसके सामने न हो।

आनन्द - बेशक यह एक नई बात है। अगर किसी के सामने हम यह किस्सा बयान करें तो वह यही कहेगा कि तुमको धोखा हुआ। जिन लोगों को तुमने आईने में देखा था वे तुम्हारे पीछे की तरफ से निकल गये होंगे और तुमने उस बात का खयाल न किया होगा मगर नहीं, अगर वास्तव में ऐसा होता तो आईने में भी हम उन्हें अपने पीछे की तरफ से जाते हुए देखते। जरूर इसका सबब कोई दूसरा ही है जो हम लोगों की समझ में नहीं आ रहा है।

इन्द्र - खैर फिर अब किया क्या जाये इस मंजिल से नीचे उतर जाने को किसी और तरफ जाने के लिए रास्ता भी तो दिखाई नहीं देता। (उंगली का इशारा करके) सिर्फ वह एक निशान है जहां से अपने आप एक दरवाजा पैदा होगा या हम लोग दरवाजा पैदा कर सकते हैं मगर वह दरवाजा उसी अजदहे वाली कोठरी का है जिसमें जाने के लिए हम लोग यहां आए हैं।

आनन्द - ठीक है, मगर क्या हम लोग तिलिस्मी खंजर से इस शीशे को तोड़ या काट नहीं सकते?

इन्द्र - जरूर काट सकते हैं मगर यह कार्रवाई अपने मन की होगी।

आनन्द - तो क्या हर्ज है, आज्ञा दीजिये तो एक हाथ शीशे पर लगाऊं!

इन्द्र - सो ही कर देखो, मगर कहीं कोई बखेड़ा न पैदा हो

"अब तो होना हो सो हो!" इतना कहकर आनन्दसिंह तिलिस्मी खंजर लिये हुए आईने की तरफ बढ़े। उसी वक्त एक आवाज हुई और बाएं तरफ की शीशे वाली दीवार में ठीक उसी जगह एक छोटा-सा दरवाजा निकल आया जहां कुमार ने हाथ का इशारा करके आनन्दसिंह को बताया था, मगर दोनों कुमारों ने उसके अन्दर जाने का खयाल भी न किया और आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खंजर का एक भरपूर हाथ अपने सामने वाले शीशे पर लगाया, जिसका नतीजा यह हुआ कि शीशे का एक बहुत बड़ा टुकड़ा भारी आवाज देकर पीछे की तरफ हट गया और आनन्दसिंह इस तरह उसके अन्दर घुस गये जैसे हवा के किसी खिंचाव या बवण्डर ने उन्हें अपनी तरफ खींच लिया हो, इसके बाद वह शीशे का टुकड़ा फिर ज्यों-का-त्यों बराबर मालूम होने लगा।

हवा के खिंचाव का असर कुछ-कुछ इन्द्रजीतसिंह पर भी पड़ा मगर वे दूर खड़े थे इसलिए खिंचकर वहां तक न जा सके पर आनन्दसिंह उसके पास होने के कारण खिंचकर अन्दर चले गये।

आनन्दसिंह का यकायक इस तरह आफत में फंस जाना बहुत ही बुरा हुआ, इस बात का जितना रंज इन्द्रजीतसिंह को हुआ सो वे ही जान सकते हैं। उनकी आंखों में आंसू भर आए और बेचैन होकर धीरे से बोले - "अब जब तक कि मैं इस शीशे के अन्दर न चला जाऊंगा अपने भाई को छुड़ा न सकूंगा और न इस बात का ही पता लगा सकूंगा कि उस पर क्या मुसीबत आई।" इतना कहकर वे तिलिस्मी खंजर लिये हुए शीशे की तरफ बढ़े मगर दो ही कदम जाकर रुक गये और फिर सोचने लगे, "कहीं ऐसा न हो कि जिस मुसीबत में आनन्द पड़ गया है उसी मुसीबत में मैं भी फंस जाऊं! यदि ऐसा हुआ तो हम दोनों इसी तिलिस्म में मरकर रह जायेंगे। यहां कोई ऐसा भी नहीं जो हम लोगों की सहायता करेगा लेकिन ईश्वर की कृपा से तिलिस्म के इस दर्जे को मैं अकेला तोड़ सकूं तो निःसन्देह आनन्द को छुड़ा लूंगा। मगर कहीं ऐसा न हो कि जब तक हम तिलिस्म तोड़ें तब तक आनन्द की जान पर आ बने बेशक इस आवाज ने हम लोगों को धोखे में डाल दिया, हमें तिलिस्मी बाजे पर भरोसा करके बेखौफ अजदहे के मुंह में चले जाना चाहिये था।" इत्यादि तरह-तरह की बातें सोचकर इन्द्रजीतसिंह रुक गये और आनन्दसिंह की जुदाई में आंसू गिराते हुए उसी अजदहे वाली कोठरी में चले गये जिसका दरवाजा पहिले ही खुल चुका था।

उस कोठरी में सिवाय एक अजदहे के और कुछ भी न था। इस अजदहे की मोटाई दो गज घेरे से कम न होगी। उसका खुला मुंह इस योग्य था कि उद्योग करने से आदमी उसके पेट में बखूबी घुस जाय। वह एक सोने के चबूतरे में ऊपर कुण्डली मारे बैठा था और अपने डील-डौल और खुले हुए भयानक मुंह के कारण बहुत ही डरावना मालूम पड़ता था। झूठा और बनावटी मालूम हो जाने पर भी उसके पास जाना या खड़ा होना बड़े जीवट का काम था।

इन्द्रजीतसिंह बेखौफ उस अजदहे के मुंह में घुस गये और कोशिश करके आठ या नौ हाथ के लगभग नीचे उतर गये। इस बीच में उन्हें गर्मी तथा सांस लेने की तंगी से बहुत तकलीफ हुई और उसके बाद उन्हें नीचे उतर जाने के लिए दस-बारह सीढ़ियां मिलीं। नीचे उतरने पर कई कदम एक सुरंग में चलना पड़ा और इसके बाद वे उजाले में पहुंचे।

अब जिस जगह इन्द्रजीतसिंह पहुंचे वह एक छोटा-सा तिमंजिला मकान संगमर्मर के पत्थरों से बना हुआ था, जिसका ऊपरी हिस्सा बिल्कुल खुला हुआ था, अर्थात् चौक में खड़े होने से आसमान दिखाई देता था। नीचे वाले खड्डे में जहां इन्द्रजीतसिंह खड़े थे चारों तरफ चार दालान थे और चारों दालान अच्छे बेशकीमत सोने के जड़ाऊ नुमाइशी बरतनों तथा हर्बो से भरे हुए थे। कुमार उस बेहिसाब दौलत तथा अनमोल चीजों को देखते हुए जब बाईं तरफ वाले दालान में पहुंचे तो यहां की दीवार में भी उन्होंने एक छोटा-सा दरवाजा देखा। झांकने से मालूम हुआ कि ऊपर के खण्ड में जाने के लिए सीढ़ियां हैं। कुंअर इन्द्रजीतसिंह सीढ़ियों की राह ऊपर चढ़ गये। उस खण्ड में भी चारों तरफ दालान थे। पूरब तरफ वाले दालान में कल-पुर्जे लगे हुए थे, उत्तर तरफ वाले दालान में एक चबूतरे के ऊपर लोहे का एक सन्दूक ठीक उसी ढंग का था जैसा कि तिलिस्मी बाजा का कुमार देख चुके थे। दक्खिन तरफ वाले दालान में कई पुतलियां खड़ी थीं जिनके पैरों में गड़ारीदार पहिये की तरह बना हुआ था, जमीन में लोहे की नालियां जड़ी हुई थीं और नालियों में पहिया चढ़ा हुआ था अर्थात् वह पुतलियां इस लायक थीं कि पहियों पर नालियों की बरकत से बंधे हुए (महदूद) स्थान तक चल-फिर सकती थीं, और पश्चिम तरफ वाले दालान में सिवाय एक शीशे की दीवार के और कुछ भी दिखाई नहीं देता था।

उन पुतलियों में कुमार ने कई अपने जान-पहिचान वाले और संगी-साथियों की मूरतें भी देखीं। उन्हीं में भैरोसिंह, तारासिंह, कमलिनी, लाडिली, राजा गोपालसिंह, और अपनी तथा अपने छोटे भाई की भी मूरतें देखीं जो डील-डौल और नक्शे में बहुत

असल-सी बनी हुई थीं। कमलिनी और लाडिली की मूरतों की कमर में लोहे की जंजीर बंधी हुई थी और एक मजबूत आदमी उसे थामे हुए था। कुमार ने मूरतों को हाथ का धक्का देकर चलाना चाहा मगर वह अपनी जगह से एक अंगुल भी न हिलीं। कुमार ताज्जुब से उनकी तरफ देखने लगे।

इन सब चीजों को गौर और ताज्जुब की निगाह से कुमार देख ही रहे थे कि यकायक दो आदमियों के बातचीत की आवाज उनके काम में पड़ी। वे चौंककर चारों तरफ देखने लगे मगर किसी आदमी की सूरत न दिखाई पड़ी। थोड़ी ही देर में इतना जरूर मालूम हो गया कि उत्तर तरफ वाले दालान में चबूतरे के ऊपर जो लोहे वाला सन्दूक है उसी में से यह आवाज निकल रही है। कुमार समझ गये कि वह सन्दूक उसी तरह का कोई तिलिस्मी बाजा है जैसा कि पहिले देख चुके हैं अस्तु वे तुरत उस बाजे के पास चले आये और आवाज सुनने लगे। यह बातचीत या आवाज ठीक वही थी जो कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह शीशे वाले कमरे में सुन चुके थे अर्थात् एक ने कहा, "तो क्या दोनों कुमार कुएं में से निकलकर यहां आ जायेंगे!" उसी के बाद दूसरे आदमी के बोलने की आवाज आई मानो दूसरे ने जवाब दिया, "हां जरूर आ जायेंगे, उस कुएं में लोहे का खम्भा गया हुआ है उसमें एक खटोली बंधी हुई है, उस खटोली पर बैठकर एक कल घुमाते हुए दोनों आदमी यहां आ जायेंगे - " इत्यादि जो-जो बातें दोनों कुमारों ने उस शीशे वाले कमरे में सुनी थीं ठीक वे ही बातें उसी ढंग की आवाज में कुमार ने इस बाजे में भी सुनीं। उन्हें बड़ा ताज्जुब हुआ और उन्होंने इस बात का निश्चय कर लिया कि अगर वह शीशे वाला कमरा इस दीवार के बगल में है तो निःसन्देह यही आवाज हम दोनों भाइयों ने सुनी थी। इसके साथ ही कुमार की निगाह पश्चिम तरफ वाले दालान में शीशे की दीवार के ऊपर पड़ी और वे धीरे से बोल उठे, "बेशक इसी दीवार के उस तरफ वह कमरा है और ताज्जुब नहीं कि उस कमरे में इस तरफ यही शीशे की दीवार हम लोगों ने देखी भी हो।"

इतने ही में दक्खिन तरफ वाले दालान में से धीरे-धीरे कुछ कल-पुर्जों के घूमने की आवाज आने लगी, कुमार ने उस तरफ देखा तो भैरोसिंह और तारासिंह की मूरत को अपने ठिकाने से चलते हुए पाया, उन दोनों की मूरतों की अकड़कर चलने वाली चाल भी ठीक वैसी ही थी जैसी कुमार उस शीशे के अन्दर देख चुके थे। जिस समय वे दोनों मूरतें चलती हुई उस शीशे वाली दीवार के पास पहुंचीं उसी समय दीवार में एक दरवाजा निकल आया और दोनों मूरतें उसके अन्दर घुस गईं। इसके बाद कमलिनी और लाडिली की मूरतें चलीं और उनके पीछे वाला आदमी जो जंजीर थामे हुए था पीछे-पीछे चला, ये सब उसी तरह शीशे वाली दीवार के अन्दर जाकर थोड़ी देर के

बाद फिर अपने ठिकाने लौट आये और वह दरवाजा ज्यों-का-त्यों बन्द हो गया। अब कुंअर इन्द्रजीतसिंह के दिल में किसी तरह का शक नहीं रहा, उन्हें निश्चय हो गया कि उस शीशे वाले कमरे में जो कुछ हम दोनों ने सुना और देखा वह वास्तव में कुछ भी न था, या अगर कुछ था तो वही जो कि यहां आने से मालूम हुआ है, साथ ही इसके कुमार यह भी सोचने लगे कि, 'ये हमारे संगी-साथियों और मुलाकातियों की मूरतें पुरानी बनी हुई हैं या उन तस्वीरों की तरह इन्हें भी राजा गोपालसिंह ने स्थापित किया है, और इन मूरतों का चलना-फिरना तथा इस बाजे का बोलना किसी खास वक्त पर मुकर्रर है या घण्टे-घण्टे, दो-दो घण्टे पर ऐसा ही हुआ करता है मगर नहीं घड़ी-घड़ी व्यर्थ ऐसा होना अनुचित है। तो क्या जब शीशे वाले कमरे में कोई जाता है तभी ऐसी बातें होती हैं क्योंकि हम लोगों के भी वहां पहुंचने पर यही दृश्य देखने में आया था। अगर मेरा यह खयाल ठीक है तो अब भी उस शीशे वाले कमरे में कोई पहुंचा होगा। गैर आदमी का वहां पहुंचना तो असम्भव है अगर कोई वहां पहुंचता है तो चाहे वह आनन्दसिंह हो या राजा गोपालसिंह हों। कौन ठिकाना फिर किसी कारण से आनन्दसिंह वहां पहुंचा हो। अगर ऐसा हो तो जिस तरह इस बाजे की आवाज उस कमरे में पहुंचती है उसी तरह मेरी आवाज भी वहां वाला सुन सकता है।' इत्यादि बातें कुमार ने जल्दी-जल्दी सोचीं और इसके बाद ऊंचे स्वर में बोले, "शीशे वाले कमरे में कौन है?'

जवाब - मैं हूं आनन्दसिंह, क्या मैं भाई साहब की आवाज सुन रहा हूं?

इन्द्र - हां मैं यहां आ पहुंचा हूं, तुम भी जहां तक जल्दी हो सके उस अजदहे के मुंह में चले जाओ और हमारे पास पहुंचो।

जवाब - बहुत अच्छा।

बयान **- 7**

किस्मत जब चक्कर खिलाने लगती है तो दम-भर भी सुख की नींद सोने नहीं देती। इसकी बुरी निगाह के नीचे पड़े हुए आदमी को तभी कुछ निश्चिन्ती होती है जब इसका पूरा दौर (जो कुछ करना हो करके) बीत जाता है। इस किस्से को पढ़कर पाठक इतना तो जान ही गए होंगे कि इन्द्रदेव भी सुखियों की पंक्ति में गिने जाने लायक नहीं है। वह भी जमाने के हाथों से अच्छी तरह सताया जा चुका है, परन्तु उस जवांमर्द की आंखों में बहुत-सी रातें उन दिनों की भी बीत चुकी हैं जबकि उसका मजबूत दिल कई तरह की खुशियों से नाउम्मीद होकर 'हरि इच्छा' का मन्त्र जपता

हुआ एक तरह से बेफिक्र हो बैठा था। मगर आज उसके आगे फिर बड़ी दुखदाई घड़ी पहिले से दूना विकराल रूप धारण करे आ खड़ी हुई है। इतने दिन तक वह यह समझकर कि उसकी स्त्री और लड़की इस दुनिया से कूच कर गईं, सब्र करके बैठा हुआ था, लेकिन जबसे उसे अपनी स्त्री और लड़की के इस दुनिया में मौजूद रहने का कुछ हाल और आपस वालों की बेईमानी का पता मालूम हुआ है तब से अफसोस, रंज ओर गुस्से से उसके दिल की अजब हालत हो रही है।

लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को समझा-बुझाकर जब इन्द्रदेव बलभद्रसिंह को छुड़ाने की नीयत से जमानिया की तरफ रवाना हुए तो पहाड़ी के नीचे पहुंचकर उन्होंने अपने अस्तबल से एक उम्दा घोड़ा खोला और उस पर सवार हो पांच ही सात कदम आगे बढ़े थे कि राजा गोपालसिंह का भेजा हुआ एक सवार आ पहुंचा जिसने सलाम करके एक चीठी उनके हाथ में दी और उन्होंने उसे खोलकर पढ़ा।

इस चीठी में राजा गोपालसिंह ने यहां लिखा था, "यह सुनकर आपको बड़ा आश्चर्य होगा कि आजकल इन्दिरा मेरे घर में है और उसकी मां भी जीती है जो यद्यपि तिलिस्म में फंसी हुई है मगर उसे अपनी आंखों से देख आया हूं। अस्तु आप पत्र पढ़ते ही अकेले मेरे पास चले आइये।"

इस चीठी को पढ़कर इन्द्रदेव कितना खुश हुए होंगे यह हमारे पाठक स्वयम् समझ सकते हैं। अस्तु वे तेजी के साथ जमानिया की तरफ रवाना हुए और समय से पहिले ही जमानिया जा पहुंचे। जब राजा गोपालसिंह को उनके आने की खबर हुई तो वे दरवाजे तक आकर बड़ी मुहब्बत से इन्द्रदेव को घर के अन्दर ले गये और गले से मिलकर अपने पास बैठाया तथा इन्दिरा को बुलवा भेजा। जब इन्दिरा को अपने पिता के आने की खबर मिली, दौड़ती हुई राजा गोपालसिंह के पास आई और अपने पिता के पैरों पर गिरकर रोने लगी। इस समय कमरे के अन्दर राजा गोपालसिंह, इन्द्रदेव और इन्दिरा के सिवाय और कोई भी न था। कमरा एकान्त कर दिया गया था, यहां तक कि जो लौंडी इन्दिरा को बुलाकर लाई थी वह भी बाहर कर दी गई थी।

इन्दिरा के रोने ने राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव का कलेजा भी हिला दिया और वे दोनों भी रोने से अपने आपको बचा न सके। आखिर उन्होंने बड़ी मुश्किल से अपने को सम्हाला और इन्दिरा को दिलासा देने लगे। थोड़ी देर बाद जब इन्दिरा का जी ठिकाने हुआ तो इन्द्रदेव ने उसका हाल पूछा और उसने अपना दर्दनाक किस्सा कहना शुरू किया।

इन्दिरा का हाल जो कुछ ऊपर के बयान में लिख चुके हैं वह और उसके बाद का अपना तथा अपनी मां का बचा हुआ किस्सा भी इन्दिरा ने बयान किया जिसे सुनकर इन्द्रदेव की आंखें खुल गईं और उन्होंने एक लम्बी सांस लेकर कहा -

"अफसोस, हरदम साथ रहने वालों की जब यह दशा है तो किस पर विश्वास किया जाये! खैर कोई चिन्ता नहीं।"

गोपाल - मेरे प्यारे दोस्त, जो कुछ होना था सो हो गया, अब अफसोस करना वृथा है। क्या मैं उन राक्षसों से कुछ कम सताया गया हूं ईश्वर न्याय करने वाला है, और तुम देखोगे कि उनका पाप उन्हें किस तरह खाता है। रात बीत जाने पर मैं इन्दिरा की मां से भी तुम्हारी मुलाकात कराऊंगा। अफसोस, दुष्ट दारोगा ने उसे ऐसी जगह पहुंचा दिया है जहां से वह स्वयं तो निकल ही नहीं सकती, मैं खुद तिलिस्म का राजा कहलाकर भी उसे छुड़ा नहीं सकता। लेकिन अब कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वह तिलिस्म तोड़ रहे हैं, आशा है कि वह बेचारी भी बहुत जल्द इस मुसीबत से छूट जायेगी।

इन्द्रदेव - क्या इस समय मैं उसे नहीं देख सकता?

गोपाल - नहीं, यदि दोनों कुमार तिलिस्म तोड़ने में हाथ न लगा चुके होते तो शायद मैं ले भी चलता मगर अब रात के वक्त वहां जाना असम्भव है।

जिस समय इन्द्रदेव और गोपालसिंह की मुलाकात हुई थी चिराग जल चुका था। यद्यपि इन्दिरा ने अपना किस्सा संक्षेप में बयान किया था मगर फिर भी इस काम में डेढ़ पहर का समय बीत गया था। इसके बाद राजा गोपालसिंह ने अपने सामने इन्द्रदेव को खाना खिलाया और इन्द्रदेव ने अपना तथा रोहतासगढ़ का हाल कहना शुरू किया तथा इस समय तक जो मामले हो चुके थे सब खुलासा बयान किया। तमाम रात बातचीत में बीत गई और सबेरा होने पर जरूरी कामों से छुट्टी पाकर तीनों आदमी तिलिस्म के अन्दर जाने के लिए तैयार हुए।

इस जगह हमें यह कह देना चाहिए कि इन्दिरा को तिलिस्म के अन्दर से निकालकर अपने घर में ले आना राजा गोपालसिंह ने बहुत गुप्त रक्खा था और ऐयारी के ढंग पर उसकी सूरत भी बदलवा दी थी।

बयान **- 8**

आनन्दसिंह की आवाज सुनने पर इन्द्रजीतसिंह का शक जाता रहा और वे आनन्दसिंह के आने का इन्तजार करते हुए नीचे उतर आए जहां थोड़ी ही देर बाद उन्होंने अपने छोटे भाई को उसी राह से आते देखा जिस राह से वे स्वयं इस मकान में आये थे।

इन्द्रजीतसिंह अपने भाई के लिए बहुत दुःखी थे, उन्हें विश्वास हो गया था कि आनन्दसिंह किसी आफत में फंस गये और बिना तरद्दुद के उनका छूटना कठिन है मगर थोड़ी ही देर में बिना झंझट के उनके आ मिलने से उन्हें कम ताज्जुब न हुआ। उन्होंने आनन्दसिंह को गले से लगा लिया और कहा -

इन्द्र - मैं तो समझता था कि तुम किसी आफत में फंस गए और तुम्हारे छुड़ाने के लिए बहुत ज्यादा तरद्दुद करना पड़ेगा।

आनन्द - जी नहीं, वह मामला तो बिल्कुल खेल ही निकला। सच तो यह है कि इस तिलिस्म में दिल्लगी और मसखरेपन का भाग भी मिला हुआ है।

इन्द्र - तो तुम्हें किसी तरह की तकलीफ नहीं हुई?

आनन्द - कुछ भी नहीं, हवा के खिंचाव के कारण जब मैं शीशे के अन्दर चला गया तो वह शीशे का टुकड़ा जिसे दरवाजा कहना चाहिए बन्द हो गया और मैंने अपने को पूरे अन्धकार में पाया। तिलिस्मी खंजर का कब्जा दबाकर रोशनी की तो सामने एक छोटा-सा दरवाजा एक पल्ले का दिखाई पड़ा जिसमें खेंचने के लिए लोहे की दो कड़ियां लगी हुई थीं। मैंने बाएं हाथ से एक कड़ी पकड़कर दरवाजा खेंचना चाहा मगर वह थोड़ा-सा खिंचकर रह गया, सोचा कि इसमें दो कड़ियां इसीलिए लगी हैं कि दोनों हाथों से पकड़कर दरवाजा खींचा जाये अस्तु तिलिस्मीं खंजर म्यान में रख लिया जिससे पुनः अंधकार हो गया और इसके बाद दोनों हाथ उन कड़ियों में चिपक गये और दरवाजा भी न खुला। उस समय मैं बहुत ही घबड़ा गया और हाथ छुड़ाने के लिए जोर करने लगा। दस-बारह पल के बाद वह कड़ी पीछे की तरफ हटी और मुझे खींचती हुई दूर तक ले गई। मैं यह नहीं कह सकता कि कड़ियों के साथ दरवाजे का कितना बड़ा भाग पीछे की तरफ हटा था मगर इतना मालूम हुआ कि मैं जमीन की तरफ जा रहा हूं। आखिर जब उन कड़ियों का पीछे हटना बन्द हो गया तो मेरे दोनों हाथ भी छूट गए, इसके बाद थोड़ी देर तक धड़धड़ाहट की आवाज आती रही और तब तक मैं चुपचाप खड़ा रहा।

जब धड़धड़ाहट की आवाज बन्द हो गई तो मैंने तिलिस्मी खंजर निकालकर रोशनी की और अपने चारों तरफ गौर करके देखा। जिधर से ढालुवीं जमीन उतरती हुई वहां तक पहुंची थी उस तरफ अर्थात् पीछे की तरफ बिना चौखट का एक बन्द दरवाजा पाया जिससे मालूम हुआ कि अब मैं पीछै की तरफ नहीं हट सकता, मगर दाहिनी तरफ एक और दरवाजा देखकर मैं उसके अन्दर चला गया और दो कदम के बाद घूमकर फिर मुझे ऊंची जमीन अर्थात् चढ़ाव पड़ा, जिससे साफ मालूम हो गया कि मैं जिधर से उतरता हुआ आया था अब उसी तरफ पुनः जा रहा हूं। कई कदम जाने के बाद पुनः एक बन्द दरवाजा मिला मगर वह आपसे आप खुल गया। जब मैं उसके अन्दर गया तो अपने को उसी शीशे वाले कमरे में पाया और घूमकर पीछे की तरफ देखा तो साफ दीवार नजर पड़ी। यह नहीं मालूम होता था कि मैं किसी दरवाजे को लांघकर कमरे में आ पहुंचा हूं, इसी से मैं कहता हूं कि तिलिस्म बनाने वाले मसखरे भी थे, क्योंकि उन्हीं की चालाकियों ने मुझे घुमा-फिराकर पुनः उसी कमरे में पहुंचा दिया जिसे एक तरह की जबर्दस्ती कहना चाहिए।

मैं उस कमरे में खड़ा हुआ ताज्जुब से उसी शीशे की तरफ देख रहा था कि पहिले की तरह दो आदमियों के बातचीत की आवाज सुनाई दी। मैं आपके साथ उस कमरे में था तब तक जो बातें सुनने में आई थीं वे ही पुनः सुनीं और जिन लोगों को उस आईने के अन्दर आते-जाते देखा था उन्हीं को पुनः देखा भी। निःसन्देह मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ और मैं बड़ै गौर से तरह-तरह की बातें सोच रहा था कि इतने में ही आपकी आवाज सुनाई दी और आपकी आज्ञानुसार अजदहे के मुंह में जाकर यहां तक आ पहुंचा। आप यहां किस राह से आए हैं?

इन्द्र - मैं भी उसी अजदहे के मुंह से होता हुआ आया हूं और यहां आने पर मुझे जो-जो बातें मालूम हुई हैं उनसे शीशे वाले कमरे का कुछ भेद मालूम हो गया।

आनन्द - सो क्या?

इन्द्रजीत - मेरे साथ आओ, मैं सब तमाशा तुम्हें दिखाता हूं।

अपने छोटे भाई को साथ लिये कुंअर इन्द्रजीतसिंह नीचे के खण्ड वाली सब चीजों को दिखाकर ऊपर वाले खण्ड में गये और वहां का बिल्कुल हाल कहा। बाजा और मूरत इत्यादि दिखाया और बाजे के बोलने तथा मूरत के चलने-फिरने के विषय में भी अच्छी तरह समझाया जिससे इन्द्रजीतसिंह की तरह आनन्दसिंह का भी शक जाता रहा। इसके बाद आनन्दसिंह ने पूछा, "अब क्या करना चाहिए?'

इन्द्रजीत - यहां से बाहर निकलने के लिए दरवाजा खोलना चाहिए। मैं यह निश्चय कर गया हूं कि इस खण्ड के ऊपर जाने के लिए कोई रास्ता नहीं है और न ऊपर जाने से कुछ काम ही चलेगा, अतएव हमें पुनः नीचे वाले खण्ड में चलकर दरवाजा ढूंढ़ना चाहिए, या तुमने अगर कोई और बात सोची हो तो कहो।

आनन्द - मैं तो यह सोचता हूं कि आखिर तिलिस्म तोड़ने के लिए ही तो यहां आए हैं, इसलिये जहां तक बन पड़े यहां की चीजों को तोड़-फोड़ और नष्ट-भ्रष्ट करना चाहिए, इसी बीच में कहीं-न-कहीं कोई दरवाजा दिखाई दे ही जायगा।

इन्द्रजीत **-** (मुस्कराकर) यह भी एक बात है, खैर तुम अपने ही खयाल के मुताबिक कार्रवाई करो, हम तमाशा देखते हैं।

आनन्द - बहुत अच्छा, तो आइये पहिले उस दरवाजे को खोलें जिसके अन्दर पुतलियां जाती हैं।

इतना कहकर आनन्दसिंह उस दालान में गये जिसमें कमलिनी, लाडिली तथा ऐयारों की मूरतें थीं। हम ऊपर लिख चुके हैं कि ये मूरतें लोहे की नालियों पर चलकर जब शीशे वाली दीवार के पास पहुंचती थीं तो वहां का दरवाजा आप से आप खुल जाता था। आनन्दसिंह भी उसी दरवाजे के पास गये और कुछ सोचकर उन्हीं नालियों पर पैर रक्खा जिन पर पुतलियां चलती थीं।

नालियों पर पैर रखने के साथ ही दरवाजा खुल गया और दोनों भाई उस दरवाजे के अन्दर चले गये। इन्हें वहां से दो रास्ते दिखाई पड़े, एक दरवाजा तो बन्द था और जंजीर में एक भारी ताला लगा हुआ था और दूसरा रास्ता शीशे वाली दीवार की तरफ गया हुआ था जिसमें पुतलियों के आने-जाने के लिए नालियां भी बनी हुई थीं। पहिले दोनों कुमार पुतलियों के चलने का हाल मालूम करने की नीयत से उसी तरफ गए और वहां अच्छी तरह घूम-फिरकर देखने और जांच करने पर जो कुछ उन्हें मालूम हुआ उसका तत्व हम नीचे लिखते हैं।

वहां शीशे की तीन दीवारें थीं और हर एक के बीच में आदमियों के चलने-फिरने लायक रास्ता छूटा हुआ था। पहिली शीशे की दीवार जो कमरे की तरफ थी सादी थी अर्थात् उस शीशे के पीछे पारे की कलई की हुई न थी, हां उसके बाद वाली दूसरी शीशे वाली दीवार में कलई की हुई थी और वहां जमीन पर पुतलियों के चलने के लिए नालियां भी कुछ इस ढंग से बनी हुई थीं कि बाहर वालों को दिखाई न पड़ें और पुतलियां कलई वाले शीशे के साथ सटी हुई चल सकें। यही सबब था कि कमरे की

तरफ से देखने वालों के शीशे के अन्दर आदमी चलता हुआ मालूम पड़ता था और उन नकली आदमियों की परछाईं भी जो शीशे में पड़ती थी, साथ सटे रहने के कारण देखने वाले को दिखाई नहीं पड़ती थी। मूरतें आगे जाकर घूमती हुई दीवार के पीछे चली जाती थीं जिसके बाद फिर शीशे की दीवार थी और उस पर नकली कलई की हुई थी। इस गली में भी नाली बनी हुई थी और उसी राह से मूरतें लौटकर अपने ठिकाने जा पहुंचती थीं।

इन सब चीजों को देखकर जब कुमार लौटे तो बन्द दरवाजे के पास आये जिसमें एक बड़ा ताला लगा हुआ था। खंजर से जंजीर काटकर दोनों भाई उसके अन्दर गये, तीन-चार कदम जाने के बाद नीचे उतरने के लिए सीढ़ियां मिलीं। इन्द्रजीतसिंह अपने हाथ में तिलिस्मी खंजर लिये हुए रोशनी कर रहे थे।

दोनों भाई सीढ़ियां उतरकर नीचे चले गए और इसके बाद उन्हें एक बारीक सुरंग में चलना पड़ा। थोड़ी देर बाद एक दरवाजा मिला, उसमें भी ताला लगा हुआ था, आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खंजर से उसकी भी जंजीर काट डाली और दरवाजा खोलकर दोनों भाई उसके भीतर चले गये।

इस समय दोनों कुमारों ने अपने को एक बाग में पाया। वह बाग छोटे-छोटे जंगली पेड़ों और लताओं से भरा हुआ था। यद्यपि यहां की क्यारियां निहायत खूबसूरत और संगमर्मर के पत्थर से बनी हुई थीं मगर इनमें सिवाय झाड़-झंखाड़ के और कुछ न था। इसके अतिरिक्त और भी चारों तरफ एक प्रकार का जंगल हो रहा था, हां दो-चार पेड़ फल के वहां जरूर थे और एक छोटी-सी नहर भी एक तरफ से आकर बाग में घूमती हुई दूसरी तरफ निकल गई थी। बाग के बीचोंबीच में एक छोटा-सा बंगला बना हुआ था जिसकी जमीन, दीवार और छत इत्यादि सब पत्थर की और मजबूत बनी हुई थीं मगर फिर भी उसका कुछ भाग टूट-फूटकर खराब हो रहा था।

जिस समय दोनों कुमार इस बाग में पहुंचे उस समय दिन बहुत कम बाकी था और ये दोनों भाई भी भूख-प्यास और थकावट से परेशान हो रहे थे अस्तु नहर के किनारे जाकर दोनों ने हाथ-मुंह धोए और जरा आराम लेकर जरूरी कामों के लिए चले गये। उससे छुट्टी पाने के बाद दो-चार फल तोड़कर खाये और नहर का जल पीकर इधर-उधर घूमने-फिरने लगे। उस समय उन दोनों को यह मालूम हुआ कि जिस दरवाजे की राह से वे दोनों इस बाग में आये थे वह आप से आप ऐसा बन्द हो गया कि उसके खुलने की उम्मीद नहीं।

दोनों भाई घूमते हुए बीच वाले बंगले में आये। देखा कि तमाम जमीन कूड़ा-कर्कट से खराब हो रही है। एक पेड़ से बड़े-बड़े पत्ते वाली छोटी डाली तोड़ जमीन साफ की और रात-भर उसी जगह गुजारा किया।

सुबह को जरूरी कामों से छुट्टी पाकर दोनों भाइयों ने नहर में दुपट्टा (कमरबन्द) धोकर सूखने को डाला और जब वह सूख गया तो स्नान-पूजा से निश्चिन्त हो दो-चार फल खाकर पानी पीया और पुनः बाग में घूमने लगे।

इन्द्रजीत - जहां तक मैं सोचता हूं यह वही बाग है जिसका हाल तिलिस्मी बाजे से मालूम हुआ था मगर उस पिण्डी का पता नहीं लगता।

आनन्द - निःसन्देह वही बाग है! यह बीच वाला बंगला हमारा शक दूर करता है इसलिये जल्दी करके इस बाग के बाहर हो जाने की फिक्र न करनी चाहिए कहीं ऐसा न हो कि 'मनुबाटिका' यही जगह हो और हम धोखे में आकर इसके बाहर हो जायें। बाजे ने भी यही कहा था कि यदि अपना काम किये बिना 'मनुबाटिका' के बाहर हो जाओगे तो तुम्हारे किये कुछ भी न होगा, न तो पुनः 'मनुबाटिका' में जा सकोगे और न अपनी जान बचा सकोगे।

इन्द्र - रक्तग्रन्थ में भी तो यही बात लिखी है, इसीलिये मैं भी यहां से बाहर निकल चलने के लिए नहीं कह सकता, मगर अब जिस तरह हो उस पिण्डी का पता लगाना चाहिए।

पाठक, तिलिस्मी किताब (रक्तग्रन्थ) और तिलिस्मी बाजे से दोनों कुमारों को यह मालूम हुआ था कि मनुबाटिका में किसी जगह जमीन पर एक छोटी-सी पिण्डी बनी हुई मिलेगी। उसका पता लगाकर उसी को अपने मतलब का दरवाजा समझना। यही सबब था कि दोनों कुमार उस पिण्डी को खोज निकालने की फिक्र में लगे हुए थे मगर उस पिण्डी का पता नहीं लगता था। लाचार उन्हें कई दिनों तक उस बाग में रहना पड़ा। आखिर एक घनी झाड़ी के अन्दर उस पिण्डी का पता लगा। वह करीब हाथ भरके ऊंची और तीन हाथ के घेरे में होगी और यह किसी तरह भी मालूम नहीं हो रहा था कि वह पत्थर की है या लोहे-पीतल इत्यादि किसी धातु की बनी हुई है। जिस चीज से वह पिण्डी बनी हुई थी उसी चीज से बना हुआ सूर्यमुखी का एक फूल उसके ऊपर जड़ा हुआ था और यही उस पिण्डी की पूरी पहिचान था। आनन्दसिंह ने खुश होकर इन्द्रजीतसिंह से कहा -

आनन्द - वाह रे किसी तरह ईश्वर की कृपा से इस पिण्डी का पता तो लगा, मैं समझता हूं इसमें आपको किसी तरह का शक न होगा?

इन्द्र - मुझे किसी तरह का शक नहीं है, यह पिण्डी निःसन्देह वही है जिसे हम लोग खोज रहे थे। अब इस जमीन को अच्छी तरह साफ करके अपने सच्चे सहायक रक्तग्रन्थ से हाथ धो बैठने के लिये तैयार हो जाना चाहिए।

आनन्द - जी हां, ऐसा ही होना चाहिए, यदि रक्तग्रन्थ में कुछ संदेह हो तो उसे पुनः देख जाइये।

इन्द्र - यद्यपि इस ग्रन्थ में मुझे किसी तरह का सन्देह नहीं है और जो कुछ उसमें लिखा है मुझे अच्छी तरह याद है मगर शक मिटाने के लिए एक दफे उलट-पलटकर जरूर देख लूंगा।

आनन्द - मेरा भी यही इरादा है। यह काम घण्टे-दो घण्टे के अन्दर हो भी जायगा। अस्तु आप पहिले रक्तग्रन्थ देख जाइये तब तक मैं इस झाड़ी को साफ किये डालता हूं।

इतना कहकर आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खंजर से काट के पिण्डी के चारों तरफ के झाड़-झंखाड़ को साफ करना शुरू किया और इन्द्रजीतसिंह नहर के किनारे बैठकर तिलिस्मी किताब को उलट-पलटकर देखने लगे। थोड़ी देर बाद इन्द्रजीतसिंह आनन्दसिंह के पास आये और बोले - "लो अब तुम भी इसे देखकर अपना शक मिटा लो और तब तक तुम्हारे काम को मैं पूरा कर डालता हूं!"

आनन्दसिंह ने अपना काम छोड़ दिया और अपने भाई के हाथ से रक्तग्रन्थ लेकर नहर के किनारे चले गये तथा इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर से पिण्डी के चारों तरफ की सफाई करनी शुरू कर दी। थोड़ी ही देर में जो कुछ घास-फूस झाड़-झंखाड़ पिण्डी के चारों तरफ था साफ हो गया और आनन्दसिंह भी तिलिस्मी किताब देखकर अपने भाई के पास चले आये और बोले, "अब क्या आज्ञा है?'

इसके जवाब में इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "बस नहर के किनारे चलो और रक्तग्रन्थ का आटा गूंथो।"

दोनों भाई नहर के किनारे आये और एक ठिकाने साएदार जगह देखकर बैठ गये। उन्होंने नहर के किनारे वाले एक पत्थर की चट्टान को जल से अच्छी तरह धोकर

साफ किया और इसके बाद रक्तग्रन्थ को पानी में डुबोकर उस पत्थर पर रख दिया। देखते ही देखते जो कुछ पानी रक्तग्रन्थ में लगा था उसी में पच गया। फिर हाथ से उस पर पानी डाला, वह भी पच गया। इसी तरह बार-बार चुल्लू भर-भरकर उस पर पानी डालने लगे और ग्रन्थ पानी पी-पीकर मोटा होने लगा। थोड़ी देर के बाद वह मुलायम हो गया और तब आनन्दसिंह ने उसे हाथ से मलके आटे की तरह गूंथना शुरू किया। शाम होने तक उसकी सूरत ठीक गूंथे हुए आटे की तरह हो गई। मगर रंग इसका काला था। आनन्दसिंह ने इस आटे को उठा लिया और अपने भाई के साथ उस पिण्डी के पास आकर उनकी आज्ञानुसार तमाम पिण्डी पर उसका लेप कर दिया। इसके बाद दोनों भाई यहां से किनारे हो गये और जरूरी कामों से छुट्टी पाने के काम में लगे।

बयान **- 9**

रात आधी से कुछ ज्यादा जा चुकी है और दोनों कुमार बाग के बीच वाले उसी दालान में सोये हुए हैं। यकायक किसी तरह की भयानक आवाज सुनकर दोनों भाइयों की नींद टूट गई और वे दोनों उठकर जंगले के नीचे चले आये। चारों तरफ देखने पर जब इनकी निगाह उस तरफ गई जिधर वह पिण्डी थी तो कुछ रोशनी मालूम पड़ी। दोनों भाई उसके पास गये तो देखा कि उस पिण्डी में से हाथ-भर ऊंची लाट निकल रही है। यह लाट (आग की ज्योति) नीले और कुछ पीले रंग की मिली-जुली थी। साथ ही इसके यह मालूम हुआ कि लाख या राल की तरह वह पिण्डी गलती हुई जमीन के अन्दर धंसती चली जा रही है। उस पिण्डी में से जो धुआं निकल रहा था उसमें धूप व लोबान की-सी खुशबू आ रही थी।

थोड़ी देर तक दोनों कुमार वहां खड़े रहकर यह तमाशा देखते रहे, इसके बाद इन्द्रजीतसिंह यह कहते हुए बंगले की तरफ लौटे, "ऐसा तो होना ही था, मगर उस भयानक आवाज का पता न लगा, शायद इसी में से वह आवाज भी निकली हो।" इसके जवाब में आनन्दसिंह ने कहा, "शायद ऐसा ही हो!"

दोनों कुमार अपने ठिकाने चले आए और बची हुई रात बात-चीत में काटी क्योंकि खुटका हो जाने के कारण फिर उन्हें नींद न आई। सबेरा होने पर जब वे दोनों पुनः उस पिण्डी के पास गए तो देखा कि आग बुझी हुई है और पिण्डी की जगह बहुत-सी पीले रंग की राख मौजूद है। यह देख दोनों भाई वहां से लौट आए और अपने नित्यकार्य करने से छुट्टी पा पुनः वहां जाकर उस पीले रंग की राख को निकाल वह जगह साफ करने लगे। मालूम हुआ कि वह पिण्डी जो जलकर राख हो गई है लगभग

तीन हाथ के जमीन के अन्दर थी और इसलिए राख साफ हो जाने पर तीन हाथ का गड्ढा इतना लम्बा चौड़ा निकल आया कि जिसमें दो आदमी बखूबी जा सकते थे। गड़हे के पेंदे में लोहे का एक तख्ता था जिसमें कड़ी लगी हुई थी। इन्द्रजीतसिंह ने कड़ी में हाथ डालकर वह लोहे का तख्ता उठा लिया और आनन्दसिंह को देकर कहा, "इसे किनारे रख दो।"

लोहे का तख्ता हटा देने के बाद ताले के मुंह की तरह का एक सूराख नजर आया जिसमें इन्द्रजीतसिंह ने वही तिलिस्मी ताली डाली जो पुतली के हाथ में से ली थी। कुछ तो वह ताली ही विचित्र बनी हुई थी और कुछ ताला खोलते समय इन्द्रजीतसिंह को बुद्धिमानी से काम लेना पड़ा। ताला खुल जाने के बाद जब दरवाजे की तरह का एक पल्ला हटाया गया तो नीचे उतरने के लिए सीढ़ियां नजर आईं। तिलिस्मी खंजर की रोशनी के सहारे दोनों भाई नीचे उतरे और भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया, क्योंकि ताले का छेद दोनों तरफ था और वही ताली दोनों तरफ काम देती थी।

पन्द्रह या सोलह सीढ़ियां उतर जाने के बाद दोनों कुमारों को थोड़ी दूर तक एक सुरंग में चलना पड़ा। इसके बाद ऊपर चढ़ने के लिए पुनः सीढ़ियां मिलीं और तब उसी ताली से खुलने लायक एक दरवाजा। सीढ़ियां चढ़ने और दरवाजा खोलने के बाद कुमारों को कुछ मिट्टी हटानी पड़ी और उसके बाद वे दोनों जमीन के बाहर निकले।

इस समय दोनों कुमारों ने अपने को एक और ही बाग में पाया जो लम्बाई-चौड़ाई में उस बाग से छोटा था जिसमें से कुमार आये थे। पहिले बाग की तरह यह बाग भी एक प्रकार से जंगल हो रहा था। इन्दिरा की मां अर्थात् इन्द्रदेव की स्त्री इसी बाग में मुसीबत की घड़ियां काट रही थी और इस समय भी इसी बाग में मौजूद थी इसलिए बनिस्बत पहिले बाग के इस बाग का नक्शा कुछ खुलासे तौर पर लिखना आवश्यक है।

इस बाग में किसी तरह की इमारत न थी, न तो कोई कमरा था और न कोई बंगला या दालान था, इसलिए बेचारी सर्यू को जाड़े के मौसम की कलेजा दहलाने वाली सर्दी, गर्मी की कड़कड़ी हुई धूप और बरसात का मूसलाधार पानी अपने कोमल शरीर ही के ऊपर बर्दाश्त करना पड़ता था। हां कहने के लिए ऊंचे बड़ और पीपल के पेड़ों का कुछ सहारा हो तो हो, मगर बड़े प्यार से पाली जाकर दिन-रात सुख ही से बिताने वाली एक पतिव्रता के लिए जंगलों और भयानक पेड़ों का सहारा-सहारा नहीं हो सकता बल्कि वह भी उसके लिए डराने और सताने के समान माना जा सकता है, हां वहां थोड़े से पेड़ ऐसे भी जरूर थे जिनके फलों को खाकर पति-मिलाप की आशालता में

उलझती हुई अपनी जान को बचा सकती थी और प्यास दूर करने के लिए उस नहर का पानी भी मौजूद था जो मनुबाटिका में से होती हुई इस बाग में भी आकर बेचारी सर्यू की जिन्दगी का सहारा हो रही थी। पर तिलिस्म बनाने वालों ने उस नहर को इस योग्य नहीं बनाया था कि कोई उसके मुहाने को दम - भर के लिए सुरंग मानकर एक बाग से दूसरे बाग में जा सके। इस बाग की चहारदीवारी में भी विचित्र कारीगरी की गई थी। दीवार कोई छू भी नहीं सकता था, कई प्रकार की धातुओं से इस बाग की सात हाथ ऊंची दीवार बनाई गई थी। जिस तरह रस्सियों के सहारे कनात खड़ी हो जाती है शक्ल-सूरत में वह दीवार वैसी ही मालूम पड़ती थी अर्थात् एक-एक, दो-दो, कहीं-कहीं तीन-तीन हाथ की दूरी पर दीवार में लोहे की जंजीरें लगी हुई थीं जिनका एक सिरा तो दीवार के अन्दर घुस गया था और दूसरा सिरा जमीन के अन्दर। चारों तरफ की दीवार में से किसी भी जगह हाथ लगाने से आदमी के बदन में बिजली का असर हो जाता था और वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ता था। यही सबब था कि बेचारी सर्यू उस दीवार के पार हो जाने के लिए कोई उद्योग न कर सकी बल्कि इस चेष्टा में उसे कई दफे तकलीफ भी उठानी पड़ी।

इस बाग की उत्तरी तरफ की दीवार के साथ सटा हुआ एक छोटा-सा मकान था। इस बाग में खड़े होकर देखने वालों को तो यह मकान ही मालूम पड़ता था। मगर हम यह नहीं कह सकते कि दूसरी तरफ से उसकी क्या सूरत थी। इसकी सात खिड़कियां इस बाग की तरफ थीं जिनसे मालूम होता था कि यह इस मकान का एक खुला-सा कमरा है। इस बाग में आने पर सबके पहिले जिस चीज पर कुंअर इन्द्रजीतसिंह की निगाह पड़ी वह यही कमरा था और उसकी तीन खिड़कियों में से इन्दिरा, इन्द्रदेव और राजा गोपालसिंह इस बाग की तरफ झांककर किसी को देख रहे थे और इसके बाद जिस पर उनकी निगाह पड़ी वह जमाने के हाथों से सताई हुई बेचारी सर्यू थी। मगर उसे दोनों कुमार पहिचानते न थे।

जिस तरह कुंअर इन्द्रजीतसिंह और उनके बताने से आनन्दसिंह ने राजा गोपालसिंह, इन्द्रदेव और इन्दिरा को देखा उसी तरह उन तीनों ने भी दोनों कुमारों को देखा और दूर से ही साहब-सलामत की।

इन्दिरा ने हाथ जोड़कर और अपने पिता की तरफ बताकर कुमारों से कहा, "आप ही के चरणों की बदौलत मुझे अपने पिता के दर्शन हुए!"

बयान **- 10**

अब हम अपने पाठकों को फिर उसी सफर में ले चलते हैं जिसमें चुनार जाने वाले राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर पड़ा हुआ है। पाठकों को याद होगा कि कम्बख्त मनोरमा ने तिलिस्मी खंजर से किशोरी, कामिनी और कमला का सिर काट डाला और खुशी-भरी आवाज में कुछ कह रही थी कि पीछे की तरफ से आवाज आई, "नहीं-नहीं, ऐसा न हुआ है न होगा!"

आवाज देने वाला भैरोसिंह था जिसे मनोरमा को खोज निकालने का काम सुपुर्द किया गया था। वह मनोरमा की खोज में चक्कर लगाता और टोह लेता हुआ उसी जगह जा पहुंचा था मगर उसे इस बात का बड़ा ही अफसोस था कि उन तीनों का सिर कट जाने के बाद वह खेमे के अन्दर पहुंचा।

हमारे ऐयार की आवाज सुनकर मनोरमा चौंकी और उसने घूमकर पीछे की तरफ देखा तो हाथ में खंजर लिये हुए भैरोसिंह पर निगाह पड़ी। यद्यपि भैरोसिंह पर नजर पड़ते ही वह जिन्दगी से ना-उम्मीद हो गई फिर भी उसने तिलिस्मी खंजर का वार भैरोसिंह पर किया। भैरोसिंह पहिले से होशियार था और उसके पास भी तिलिस्मी खंजर मौजूद था। अस्तु, उसने अपने खंजर पर इस ढंग से मनोरमा के खंजर का वार रोका कि मनोरमा की कलाई भैरोसिंह के खंजर पर पड़ी और वह कटकर तिलिस्मी खंजर सहित दूर जा गिरी। भैरोसिंह ने इतने ही पर सब्र न करके उसी खंजर से मनोरमा की एक टांग काट डाली और इतने के बाद जोर से चिल्लाकर पहरे वालों को आवाज दी।

पहरे वाले तो पहिले ही से बेहोश पड़े हुए थे मगर भैरोसिंह की आवाज ने लौंडियों को होशियार कर दिया और बात की बात में बहुत-सी लौंडियां उस खेमे के अन्दर आ पहुंचीं जो वहां की अवस्था देखकर जोर-जोर से रोने और चिल्लाने लगीं।

थोड़ी देर में उस खेमे के अन्दर और बाहर भीड़ लग गई। जिधर देखिए उधर मशाल जल रही है और आदमी पर आदमी टूटा पड़ता है। राजा वीरेन्द्रसिंह ओर तेजसिंह भी उस खेमे में गये और वहां की अवस्था देखकर अफसोस करने लगे। तेजसिंह ने हुक्म दिया कि तीनों लाशें उसी जगह ज्यों-की-त्यों रहने दी जायें और मनोरमा (जो कि चेहरा धुल जाने के कारण पहिचानी जा चुकी थी) वहां से उठवाकर दूसरे खेमे में पहुंचाई जाय। उसके जख्म पर पट्टी लगाई जाय और उस पर सख्त पहरा रहे। इसके बाद भैरोसिंह और तेजसिंह को साथ लिए हुए राजा वीरेन्द्रसिंह अपने खेमे में आये और बातचीत करने लगे। उस समय खेमे के अन्दर सिवाय इन तीनों के और कोई भी न था। भैरोसिंह ने अपना हाल बयान किया और कहा, "मुझे इस बात का

बड़ा दुःख है कि किशोरी, कामिनी और कमला का सिर कट जाने के बाद मैं उस खेमे के अन्दर पहुंचा!"

तेज - अफसोस की कोई बात नहीं है, ईश्वर की कृपा से हम लोगों को यह बात पहिले ही मालूम हो गई थी कि मनोरमा हमारे लश्कर के साथ है।

भैरो - अगर यह बात मालूम हो गई थी तो आपने इसका इन्तजाम क्यों नहीं किया और इन तीनों की तरफ से बेफिक्र क्यों रहे?

तेज - हम लोग बेफिक्र नहीं रहे बल्कि जो कुछ इन्तजाम करना वाजिब था किया गया। तुम यह सुनकर ताज्जुब करोगे कि किशोरी, कामिनी और कमला मरी नहीं बल्कि ईश्वर की कृपा से जीती हैं, और लौंडी की सूरत में हरदम पास रहने पर भी मनोरमा ने धोखा खाया।

भैरो - मनोरमा ने धोखा खाया और वे तीनों जीती हैं?

तेज - हां, ऐसा ही है। इसका खुलासा हाल हम तुमसे कहते हैं मगर पहिले बताओ कि तुमने मनोरमा को कैसे पहिचाना हम तो कई दिनों से पहिचानने की फिक्र में लगे हुए थे मगर पहिचान न सके क्योंकि मनोरमा के कब्जे में तिलिस्मी खंजर का होना हमें मालूम था और हम हर लौंडी की उंगलियों पर तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अंगूठी देखने की नीयत से निगाह रखते थे।

भैरो - मैं उसका पता लगाता हुआ इसी लश्कर में आ पहुंचा था। उस समय टोह लेता हुआ जब मैं किशोरी के खेमे के पास पहुंचा तो पहरे के सिपाही को बेहोश और खेमे का पर्दा हटा हुआ देख मुझे किसी दुश्मन के अन्दर जाने का गुमान हुआ और मैं भी उसी राह से खेमे के अन्दर चला गया। जब वहां की अवस्था देखी और उसके मुंह से निकली हुई बातें सुनीं तब शक हुआ कि यह मनोरमा है मगर निश्चय तब ही हुआ जब उसका चेहरा साफ किया गया और आपने भी पहिचाना। अब आप कृपा कर यह बताइए कि किशोरी, कामिनी और कमला क्योंकर जीती बचीं और जो तीनों मारी गईं वे कौन थीं?

तेज - हमें इस बात का पता लग चुका था कि भेष बदले हुए मनोरमा हमारे लश्कर के साथ है, मगर जैसा कि तुमसे कह चुके हैं उद्योग करने पर भी हम उसे पहिचान न सके। एक दिन हम और राजा साहब संध्या के समय टहलते हुए खेमे से दूर चले गये और एक छोटे टीले पर चढ़कर अस्त होते हुए सूर्य की शोभा देखने लगे। उस समय

कृष्णा जिन्न का भेजा हुआ एक सवार हमारे पास आया और उसने एक चीठी राजा साहब के हाथ में दी, राजा साहब ने चीठी पढ़कर मुझे दी। उसमें लिखा हुआ था - "मुझे इस बात का पूरा-पूरा पता लग चुका है कि कई सहायकों को साथ लिए और भेष बदले हुए मनोरमा आपके लश्कर में मौजूद है और उसके अतिरिक्त और भी कई दुष्ट किशोरी और कामिनी के साथ दुश्मनी किया चाहते हैं इसलिए मेरी राय है कि बचाव तथा दुश्मनों को धोखा देने के लिए किशोरी, कामिनी और कमला को कुछ दिन तक छिपा देना चाहिए और उनकी जगह सूरत बदलकर दूसरी लौंडियों को रख देना चाहिए। इस काम के लिए मेरा एक तिलिस्मी मकान जो आपके रास्ते में ही कुछ दूर हटकर पड़ेगा मुनासिब है, और मैंने इस काम के लिए वहां पूरा इन्तजाम भी कर दिया है। लौंडियां भी सूरत बदलने और खिदमत करने के लिए भेज दी हैं क्योंकि आपकी लौंडियों की सूरत बदलना ठीक न होगा और लश्कर में लौंडियों की कमी से लोगों को शक हो जायेगा। अस्तु आप बहुत जल्द इन्तजाम करके उन तीनों को वहां पहुंचाइए, मैं भी इन्तजाम करने के लिए पहिले ही से उस मकान में जाता हूं - " इत्यादि, इसके बाद उस मकान का पूरा-पूरा पता लिखकर अपना दस्तखत एक निशान के साथ कर दिया जिससे हम लोगों को चीठी लिखने वाले पर किसी तरह का शक न हो और उस मकान के अन्दर जाने की तर्कीब भी लिख दी थी।

कृष्णा जिन्न की राय को राजा साहब ने स्वीकार किया और पत्र का उत्तर देकर वह सवार बिदा कर दिया गया। रात के समय किशोरी, कामिनी और कमला को ये बातें समझा दी गईं और उन्होंने उसी दुष्ट मनोरमा की जुबानी दोपहर के बाद यह कहला भेजा, "हमने सुना है कि यहां से थोड़ी ही दूर पर कोई तिलिस्मी मकान है, यदि आप चाहें तो हम लोग उस मकान की सैर कर सकती हैं" इत्यादि। मतलब यह कि इसी बहाने से मैं खुद उन तीनों को रथ पर सवार कराके उस मकान में ले गया और कृष्णा जिन्न को वहां मौजूद पाया। उसने अपने हाथ से अपनी तीन लौंडियों को किशोरी, कामिनी और कमला बना हमारे रथ पर सवार कराया और हम उन्हें लेकर इस लश्कर में लौट आये। तुम जानते ही हो कि कृष्णा जिन्न कितना बड़ा बुद्धिमान और होशियार तथा हम लोगों का दोस्त आदमी है।

भैरो - बेशक, उनकी हिफाजत में किशोरी, कामिनी और कमला को किसी तरह की तकलीफ नहीं हो सकती और यह आपने बड़ी खुशी की बात सुनाई मगर मैं समझता हूं कि इन भेदों को अभी आप गुप्त रक्खेंगे और यह बात जाहिर न होने देंगे कि वे तीनों जो मारी गई हैं वास्तव में किशोरी, कामिनी और कमला न थीं।

तेज - नहीं-नहीं, अभी इस भेद का खुलना उचित नहीं है। सभों को यही मालूम रहना चाहिए कि वास्तव में किशोरी, कामिनी और कमला मारी गईं। अच्छा अब दो-चार बातें तुम्हें और कहनी हैं, वह भी सुन लो।

भैरो - जो आज्ञा।

तेज - कृष्णा जिन्न तो काम-काजी आदमी ठहरा और वह ऐसे-ऐसे बखेड़ों में फंसा है कि उसे दम मारने की फुर्सत नहीं।

भैरो - निःसन्देह ऐसा ही है। इतना काम जो वह करते हैं सो भी उन्हीं की बुद्धिमानी का नतीजा है, दूसरा नहीं कर सकता।

तेज - अस्तु कृष्णा जिन्न तो ज्यादे दिनों तक उस मकान में रह नहीं सकता जिसमें किशोरी, कामिनी और कमला हैं। वह अपने ठिकाने चला गया होगा। मगर उन तीनों की हिफाजत का पूरा-पूरा बन्दोबस्त कर गया होगा। अब तुम भी इसी समय उस मकान की तरफ चले जाओ और जब तक हमारा दूसरा हुक्म न पहुंचे या कोई आवश्यक काम न आ पड़े तब तक उन तीनों के साथ रहो, हम उस मकान का पता तथा उसके अन्दर जाने की तर्कीब तुम्हें बता देते हैं।

भैरो - जो आज्ञा, मैं अभी जाने के लिए तैयार हूं।

तेजसिंह ने उस मकान का पूरा-पूरा हाल भैरोसिंह को बता दिया और भैरोसिह उसी समय अपने बाप का चरण छूकर बिदा हुए।

भैरोसिंह के जाने के बाद सबेरा होने पर ब्राह्मण द्वारा नकली किशोरी, कामिनी और कमला की मृत देह की दाह-क्रिया कर दी गई। इसके पहिले ही लश्कर में जितने पढ़े-लिखे ब्राह्मण थे सभी को बटोरकर तेजसिंह ने यह व्यवस्था करा ली थी कि इन तीनों का कोई नातेदार यहां मौजूद नहीं है, इसलिए किसी ब्राह्मण द्वारा इतनी क्रिया करा देनी चाहिए। इस काम से छुट्टी पाने के बाद लश्कर कूच कर दिया और सब कोई धीरे-धीरे चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए।

बयान **- 11**

दोनों कुमार यद्यपि सर्यू को पहिचानते न थे मगर इन्दिरा की जुबानी उसका हाल सुन चुके थे इसलिए उन्हें शक हो गया कि यह सर्यू है। दूसरे राजा गोपालसिंह ने भी पुकारकर दोनों कुमारों से कहा कि इन्दिरा की मां सर्यू यही हैं और इन्द्रदेव ने कुमारों

की तरफ बताकर सर्यू से कहा कि, "राजा वीरेन्द्रसिंह के दोनों लड़के यही कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह हैं जो तिलिस्म तोड़ने के लिए यहां आए हैं, इन्हीं की बदौलत तुम आफत से छूटोगी।"

दोनों कुमारों को देखते ही सर्यू दौड़कर पास चली आई और कुंअर इन्द्रजीतसिंह के पैरों पर गिर पड़ी। सर्यू उम्र में कुंअर इन्द्रजीतसिंह से बहुत बड़ी थी मगर इज्जत और मर्तबे के खयाल से दोनों को अपना-अपना हक अदा करना पड़ा, कुमार ने उसे पैर पर से उठाया और दिलासा देकर कहा, "सर्यू, इन्दिरा की जुबानी मैं तुम्हारा हाल पूरा-पूरा तो नहीं मगर बहुत कुछ सुन चुका हूं और हम लोगों को तुम्हारी अवस्था पर बहुत ही रंज है। परन्तु अब तुम्हें चाहिए कि अपने दिल से दुःख को दूर करके ईश्वर को धन्यवाद दो, क्योंकि तुम्हारी मुसीबत का जमाना अब बीत गया और ईश्वर तुम्हें इस कैद से बहुत जल्द छुड़ाने वाला है। जब तक हम इस तिलिस्म में हैं तुम्हें बराबर अपने साथ रक्खेंगे और जिस दिन हम दोनों भाई तिलिस्म के बाहर निकलेंगे उस दिन तुम भी दुनिया की हवा खाती हुई मालूम करोगी कि तुम्हें सताने वालों में से अब कोई भी स्वतन्त्र नहीं रह गया और न अब तुम्हें किसी तरह का दुःख भोगगा पड़ेगा। तुम्हें ईश्वर को बहुत-बहुत धन्यवाद देना चाहिए कि दुष्टों के इतना ऊधम मचाने पर भी तुम अपने पति और प्यारी लड़की को सिवाय अपनी जुदाई के और किसी तरह के रंज और दुःख से खाली पाती हो। ईश्वर तुम लोगों का कल्याण करें।"

इसके बाद कुमार ने कमरे की तरफ सिर उठाकर देखा। राजा गोपालसिंह ने इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके कहा, "इन्दिरा के पिता इन्द्रदेव को हमने बुलवा भेजा है। शायद आज के पहिले आपने इन्हें न देखा होगा।"

उस समय पुनः इन्द्रदेव ने झुककर कुमार को सलाम किया और कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने सलाम का जवाब देकर कहा, "आपका आना बहुत अच्छा हुआ। आप इन दोनों को अपनी आंखों से देखकर प्रसन्न हुए होंगे। कहिए रोहतासगढ़ का क्या हाल है'

इन्द्रदेव - सब कुशल है। मायारानी और दारोगा तथा और कैदियों को साथ लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह चुनारगढ़ की तरफ रवाना हो गये, किशोरी, कामिनी और कमला को अपने साथ लेते गए। लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली तथा नकली बलभद्रसिंह को उनसे मांगकर मैं अपने घर ले गया और उन्हें उसी जगह छोड़कर राजा गोपालसिंह की आज्ञानुसार यहां चला आया हूं। यह हाल संक्षेप में मैंने इसलिए बयान किया कि राजा गोपालसिंह की जुबानी वहां का कुछ हाल आपको मालूम हो गया है, यह मैं सुन चुका हूं।

इन्द्रजीत - लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को आप यहां क्यों न ले आए?

इसका जवाब इन्द्रदेव ने तो कुछ भी न दिया मगर राजा गोपालसिंह ने कहा, "ये असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिए अपने मकान से रवाना हो चुके थे जब रास्ते में मेरा पत्र इन्हें मिला। परसों एक पत्र मुझे कृष्णा जिन्न का भेजा हुआ मिला था। उसके पढ़ने से मालूम हुआ कि मनोरमा भेष बदलकर राजा साहब के लश्कर में जा मिली थी जिसका पता लगाना बहुत ही कठिन था और वह किशोरी, कामिनी को मार डलने की सामर्थ्य रखती थी क्योंकि उसके पास तिलिस्मी खंजर भी था, इसलिए कृष्णा जिन्न ने राजा साहब को लिख भेजा था कि बहाना करके गुप्त रीति से किशोरी, कामिनी और कमला को हमारे फलाने तिलिस्मी मकान में (जिसका पता-ठिकाना और हाल भी लिख भेजा था) शीघ्र भेज दीजिए, मैं वहां मोजूद रहूंगा और उनके बदले में अपनी लौंडियों को किशोरी, कामिनी और कमला बनाकर भेज दूंगा जो आपके लश्कर में रहेंगी! ऐसा करने से यदि मनोरमा का वार चल भी गया तो हमारा बहुत नुकसान न होगा। राजा साहब ने भी यह बात पसन्द कर ली और कृष्णा जिन्न के कहे मुताबिक कामिनी और कमला को खुद तेजसिंह रथ पर सवार कराके कृष्णा जिन्न के तिलिस्मी मकान में छोड़ आए तथा उनकी जगह भेष बदली हुई लौंडियों को अपने लश्कर में ले गये। आज रात को कृष्णा जिन्न का दूसरा पत्र मुझे मिला जिससे मालूम हुआ कि राजा साहब के लश्कर में नकली किशोरी, कामिनी और कमला मनोरमा के हाथ से मारी गईं और मनोरमा गिरफ्तार हो गई। आज के पत्र में कृष्णा जिन्न ने यह भी लिखा है कि तुम इन्द्रदेव को एक पत्र लिख दो कि वह लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को भी बहुत जल्द उसी तिलिस्मी मकान में पहुंचा दें जिसमें किशोरी, कामिनी और कमला हैं, मैं (कृष्णा जिन्न) स्वयं यहां मौजूद रहूंगा और दो-तीन दिन के बाद दुश्मनों का रंग-ढंग देखकर किशोरी, कामिनी, कमला, लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को जमानिया पहुंचा दूंगा। इसके बाद राजा वीरेन्द्रसिंह की आज्ञा होगी या जब उचित होगा तो सभों को चुनार पहुंचाया जायगा और उन लोगों के सामने वहां भूतनाथ का मुकद्दमा होगा। कृष्णा जिन्न का यह लिखना मुझे बहुत पसन्द आया, वह बड़ा ही बुद्धिमान और नेक आदमी है। जो काम करता है उसमें कुछ-न-कुछ फायदा समझ लेता है, अस्तु मैं चाहता हूं कि (इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके) इन्हें आज ही यहां ये बिदा कर दूं जिससे ये उन तीनों औरतों को ले जाकर कृष्णा जिन्न के तिलिस्मी मकान में पहुंचा दें। वहां दुश्मनों का डर कुछ भी नहीं है और किशोरी तथा कामिनी को भी इन लोगों से मिलने की बड़ी चाह है जैसा कि कृष्णा जिन्न के पत्र से मालूम होता है।"

ये बातें जो राजा गोपालसिंह ने कहीं दोनों कुमारों को खुश करने के लिए वैसी ही थीं जैसे चातक के लिए स्वाती की बूंद। दोनों कुमारों को किशोरी और कामिनी के मिलने की आशा ने हद से ज्यादा प्रसन्न कर दिया। इन्द्रजीतसिंह ने मुस्कुराकर गोपालसिंह से कहा, "कृष्णा जिन्न की बात मानना आपके लिए उतना ही आवश्यक है जितना हम दोनों भाइयों के लिए तिलिस्म तोड़कर चुनारगढ़ पहुंचना। आप बहुत जल्द इन्द्रदेव को यहां से रवाना कीजिए।"

गोपाल - ऐसा ही होगा।

आनन्द - कृष्णा जिन्न का वह तिलिस्मी मकान कहां पर है और यहां से कै दिन की राह...।

गोपाल - यहां से कुल पन्द्रह कोस पर है।

इन्द्र - वाह-वाह, तब तो बहुत नजदीक है, (इन्द्रदेव से) मेरी तरफ से कृष्णा जिन्न को प्रणाम करके बहुत धन्यवाद दीजियेगा क्योंकि उन्होंने बड़ी चालाकी से किशोरी, कामिनी और कमला को बचा लिया।

इन्द्रदेव - बहुत अच्छा।

इन्द्र - आप तो असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिए घर से निकले थे, उनका...।

इन्द्रदेव - (राजा गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) आप कहते हैं कि नकली बलभद्रसिंह ने तुम्हें धोखा दिया, तुम अब उनकी खोज मत करो क्योंकि भूतनाथ ने असली बलभद्रसिंह का पता लगा लिया और उन्हें छुड़ा चुनारगढ़ ले गया।

गोपाल - हां कृष्णा जिन्न ने मुझे यह भी लिखा था।

इन्द्र - (मुस्कुराकर) तब तो इस खबर में किसी तरह का शक नहीं हो सकता।

इसके बाद दुनिया के पुराने नियमानुसार और बहुत दिनों से बिछुड़े हुए प्रेमियों के मिलने पर जैसा हुआ करता है उसी के मुताबिक इन्द्रदेव और सर्यू में कुछ बातें हुईं, इन्दिरा ने भी मां से कुछ बातें कीं और तब इन्दिरा और इन्द्रदेव को साथ लेकर राजा गोपालसिंह कमरे के बाहर हो गए।

बयान - 12

किशोरी, कामिनी और कमला जिस मकान में रक्खी गई थीं वह नाम ही को तिलिस्मी मकान था। वास्तव में न तो उस मकान में कोई तिलिस्म था और न किसी तिलिस्म से उसका सम्बन्ध ही था। तथापि वह मकान और स्थान बहुत सुन्दर और दिलचस्प था। ऊंची-ऊंची चार पहाड़ियों के बीच में बीस-बाईस बिंगहे के लगभग जमीन थी जिसमें तरह-तरह के कुदरती गुलबूटे लगे हुए थे जो केवल जमीन ही की तरावट से सरसब्ज बने रहते थे। पूरब की तरफ वाली पहाड़ी के ऊपर से साफ और मीठे जल का झरना गिरता था जो उस जमीन में चक्कर देता हुआ पश्चिम की तरफ की पहाड़ी के नीचे जाकर लोप हो जाता था और इस सबब से वहां की जमीन हमेशा तर बनी रहती थी। बीच में एक छोटा-सा दो मंजिल का मकान बना हुआ था और उत्तर तरफ वाली पहाड़ी पर सौ-सवा सौ हाथ ऊंचे जाकर एक छोटा-सा बंगला और भी था। शायद बनाने वाले ने इसे जाड़े के मौसम के लिए आवश्यक समझा हो क्योंकि नीचे वाले मकान में तरी ज्यादा रहती थी। किशोरी, कामिनी और कमला इसी बंगले में रहती थीं और उनकी हिफाजत के लिए जो दो-चार सिपाही तथा लौंडियां थीं उन सभों का डेरा नीचे वाले मकान में था, खाने - पीने का सामान तथा बन्दोबस्त भी उसी में था।

उन तीनों की हिफाजत के लिए जो सिपाही और लौंडियां वहां थीं उन सभों की सूरत भी ऐयारी ढंग से बदली हुई थी और यह बात किशोरी, कामिनी तथा कमला से कह दी गई थी जिससे उन तीनों को किसी तरह का खुटका न रहे।

ये तीनों जानती थीं कि ये सिपाही और लौंडियां हमारी नहीं हैं फिर भी समय की अवस्था पर ध्यान देकर उन्हें इन सभों पर भरोसा करना पड़ता था। इस मकान में आने के कारण इन तीनों की तबियत बहुत ही उदास थी। रोहतासगढ़ से रवाना होते समय इन तीनों को निश्चय हो गया था कि हम लोग बहुत जल्द चुनारगढ़ पहुंचने वाले हैं जहां न तो किसी दुश्मन का डर रहेगा और न किसी तरह की तकलीफ ही रहेगी। इससे भी बढ़कर बात यह होगी कि उसी चुनारगढ़ में हम लोगों की मुराद पूरी होगी। मगर निराशा ने रास्ते ही में पल्ला पकड़ लिया और दुश्मन के डर से इन्हें इस विचित्र स्थान में आकर रहना पड़ा जहां सिवाय गैर के अपना कोई भी दिखाई नहीं पड़ता था।

जिस दिन ये तीनों यहां आई थीं उस दिन कृष्णा जिन्न भी यहां मौजूद था। ये तीनों कृष्णा जिन्न को बखूबी जानती थीं और यह भी जानती थीं कि कृष्णा जिन्न हमारा सच्चा पक्षपाती तथा सहायक है, तिस पर तेजसिंह ने भी उन तीनों को अच्छी तरह

समझाकर कह दिया था कि यद्यपि तुम लोगों को यह नहीं मालूम कि वास्तव में कृष्णा जिन्न कौन है और कहां रहता है तथापि तुम लोगों को उस पर उतना ही भरोसा रखना चाहिए जितना हम पर रखती हो और उसकी आज्ञा भी उतनी ही इज्जत के साथ माननी चाहिए जितनी इज्जत के साथ हमारी आज्ञा मानने की इच्छा रखती हो। किशोरी, कामिनी और कमला ने यह बात बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार की थी।

जिस समय ये तीनों इस मकान में आई थीं उसके दो ही घण्टे बाद सब सामान ठीक करके कृष्णा जिन्न और तेजसिंह चले गये थे और जाती समय इन तीनों को कृष्णा जिन्न कहता गया कि तुम लोग अकेले रहने के कारण घबराना नहीं, मैं बहुत जल्द लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को तुम लोगों के पास भेजवाऊंगा और तब तुम लोग बड़ी प्रसन्नता के साथ यहां रह सकोगी, मैं भी जहां तक जल्द हो सकेगा तुम लोगों को लेने के लिए आऊंगा।

तीसरे ही दिन भैरोसिंह भी उस विचित्र स्थान में जा पहुंचे जिन्हें देख किशोरी, कामिनी और कमला बहुत खुश हुईं।

हमारे प्रेमी पाठक जानते ही हैं कि कमला और भैरोसिंह का दिल घुल-मिलकर एक हो रहा था अस्तु इस समय यह स्थान उन्हीं दोनों के लिए मुबारक हुआ और उन्हीं का यहां आने की विशेष प्रसन्नता हुई मगर उन दोनों को अपने से ज्यादा अपने मालिकों को खयाल था, उनकी प्रसन्नता के बिना अपनी प्रसन्नता वे नहीं चाहते थे और मालिक भी इस बात को अच्छी तरह जानते थे।

उस स्थान में पहुंचकर भैरोसिंह ने वहां के रास्ते की बड़ी तारीफ की और कहा कि इन्द्रदेव के मकान में जाने का रास्ता जैसा गुप्त और टेढ़ा है वैसा ही यहां का भी है, अनजान आदमी यहां कदापि आ नहीं सकता। इसके बाद भैरोसिंह ने राजा वीरेन्द्रसिंह के लश्कर का हाल बयान किया।

भैरोसिंह की जुबानी लश्कर का हाल और मनोरमा के हाथ से भेष बदली हुई तीनों लौंडियों के मारे जाने की खबर सुनकर किशोरी और कामिनी के रोंगटे खड़े हो गये। किशोरी ने कहा, "निःसन्देह कृष्णा जिन्न देवता हैं। उनकी अद्भुत शक्ति, उनकी बुद्धि और उनके विचार की जहां तक तारीफ की जाय उचित है। उन्होंने जो कुछ सोचा ठीक ही निकला!"

भैरो - इसमें कोई शक नहीं। तुम लोगों को यहां बुलाकर उन्होंने बड़ा ही काम किया। मनोरमा तो गिरफ्तार हो ही गई और भाग जाने लायक भी न रही और उसके मददगार भी अगर लश्कर के साथ होंगे तो अब गिरफ्तार हुए बिना नहीं रह सकते, इसके अतिरिक्त...।

कमला - हम लोगों को मरा जानकर कोई पीछा भी न करेगा और जब दोनों कुमार तिलिस्म तोड़कर चुनारगढ़ आ जायेंगे तब तो यही दुनिया हम लोगों के लिए स्वर्ग हो जायगी।

बहुत देर तक इन चारों में बातचीत होती रही। इसके बाद भैरोसिंह ने वहां अच्छी तरह सैर की और खा-पीकर निश्चिन्त होने के बाद इधर-उधर की बातों से उन तीनों का दिल बहलाने लगे और जब तक वहां रहे उन लोगों को उदास न होने दिया।

बयान **- 13**

संध्या होने में अभी दो घंटे से ज्यादे देर है मगर सूर्य भगवान पहाड़ की आड़ में हो गये इसलिए उस स्थान में जिसमें किशोरी, कामिनी और कमला हैं पूरब की तरफ वाली पहाड़ी के ऊपरी हिस्से के सिवाय और कहीं धूप नहीं है। समय अच्छा और स्थान बहुत ही रमणीक मालूम पड़ता है। भैरोसिंह एक पेड़ के नीचे बैठे हुए कुछ बना रहे हैं और किशोरी, कामिनी और कमला बंगले से कुछ दूर पर एक पत्थर की चट्टान पर बैठी बातें कर रही हैं।

कमला ने कहा**, "**बैठे**-**बैठे मेरा जी घबड़ा गया।**"**

कामिनी - तो तुम भी भैरोसिंह के पास जा बैठो और पेड़ की छाल छील-छीलकर रस्सी बटो।

कमला - जी मैं ऐसे गन्दे काम नहीं करती। मेरा मतलब यह था कि अगर हुक्म हो तो मैं पहाड़ी के बाहर जाकर इधर-उधर की कुछ खबर ले आऊं या जमानिया में जाकर इसी बात का पता लगाऊं कि राजा गोपालसिंह के दिल से लक्ष्मीदेवी की मुहब्बत एकदम क्यों जाती रही जो आज तक उस बेचारी को पूछने के लिए एक चिड़िया का बच्चा भी नहीं भेजा।

किशोरी - बहिन, इस बात का तो मुझे भी बड़ा रंज है। मैं सच कहती हूं कि हम लोगों में से कोई भी ऐसा नहीं है जो उसके दुःख की बराबरी करे। राजा गोपालसिंह ही की

बदौलत उसने जो-जो तकलीफ उठाई उसे सुनने और याद करने से कलेजा कांप जाता है। अफसोस, राजा गोपालसिंह ने उसकी कुछ भी कदर न की।

कामिनी - मुझे सबसे ज्यादे केवल इस बात का ध्यान रहता है कि बेचारी लक्ष्मीदेवी ने जो-जो कष्ट सहे हैं उन सभों से बढ़कर उसके लिए यह दुःख है कि राजा गोपालसिंह ने पता लग जाने पर भी उसकी कुछ सुध न ली। सब दुःखों को तो वह सह गई मगर यह दुःख उससे सहे न सहा जायगा। हाय-हाय, गोपालसिंह का भी कैसा पत्थर का कलेजा है!

किशोरी - ऐसी मुसीबत कहीं मुझे सहनी पड़ती तो मैं पल-भर भी इस दुनिया में न रहती। क्या जमाने से मुहब्बत एकदम जाती रही या राजा गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी में कोई ऐब देख लिया है?

कमला - राम-राम, वह बेचारी ऐसी नहीं है कि किसी ऐब को अपने पास आने दे। देखो अपनी छोटी बहिन की लौंडी बनकर मुसीबत के दिन किस ढंग से बिताए, मगर उसके पतिव्रत धर्म का नतीजा कुछ न निकला।

किशोरी - इस दुःख से बढ़कर दुनिया में कोई भी दुःख नहीं है। (पेड़ पर बैठे हुए एक काले कौवे की तरफ इशारा करके) देखो बहिन, यह काग हमीं लोगों की तरफ मुंह करके बार-बार बोल रहा है। (जमीन पर से एक तिनका उठाकर) यह कहता है कि तुम्हारा कोई प्रेमी यहां चला आ रहा है।

कामिनी - (ताज्जुब से) तुम्हें कैसे मालूम क्या कौवे की बोली तुम पहिचानती हो, या इस तिनके में कुछ लिखा है, या यों ही दिल्लगी करती हो?

किशोरी - मैं दिल्लगी नहीं करती सच कहती हूं, इसका पहिचानना कोई मुश्किल बात नहीं है।

कामिनी - बहिन, मुझे भी बताओ। तुम्हें इसकी तर्कीब किसने सिखाई थी?

किशोरी - मेरी मां ने मुझे एक श्लोक याद करा दिया था। उसका मतलब यह है कि जब काले कौवे (काग) की बोली सुनें तो एक बड़ा-सा साफ तिनका जमीन पर से उठा लें और अपनी उंगलियों से नाप के देखें कि कै अंगुल का है, जै अंगुल हो उसमें तेरह और मिलाकर सात-सात करके जहां तक उसमें से निकल सकें और जो कुछ बचें उनका हिसाब लगायें। एक बचे तो लाभ होगा, दो बचें तो कुछ नुकसान होगा, तीन

बचें तो सुख मिलेगा, चार बचे तो भोजन की कोई चीज मिलेगी, पांच बचें तो किसी मित्र का दर्शन होगा, छः बचें तो कलह होगी, सात बचें या यों कहो कि कुछ भी न बचे तो समझो कि अपना या किसी प्रेमी का मरना होगा, बस इतना ही तो हिसाब है।

कामिनी - तुम तो इतना कह गई लेकिन मेरी समझ में कुछ भी न आया। यह तिनका जो तुमने उंगली से नापा है इसका हिसाब करके समझा दो तो समझ जाऊंगी।

किशोरी - अच्छा देखो, यह तिनका जो मैंने नापा था छः अंगुल का है, इसमें तेरह मिला दिया तो कितना हुआ।

कामिनी - उन्नीस हुआ।

किशोरी - अच्छा इसमें से कै सात निकल सकते हैं?

कामिनी **-** (सोचकर) सात और सात चौदह, दो सात निकल गए और पांच बचे, अच्छा अब मैं समझ गई, तुम अभी कह चुकी हो कि अगर पांच बचें तो किसी मित्र का दर्शन हो। अच्छा अब वह श्लोक सुना दो क्योंकि श्लोक बड़ी जल्दी याद हो जाया करता है।

किशोरी - सुनो -

काकस्य वचनं श्रुत्वा ग्रहीत्वा तृणामुत्तमम्,

त्रयोदश समायुक्ता मुनिभिः भागमाचरेत्।

1 2 3 4 5

लाभं कष्टं महा सौख्यं भोजनं प्रियदर्शनम्

6 7

कलहो मरणं चैव काकौ वदति नान्यथा**!!**

कमला - (हंसकर) श्लोक तो अशुद्ध है!

किशोरी - अच्छा-अच्छा रहने दीजिये, अशुद्ध है तो तुम्हारी बला से, तुम बड़ी पंडित बनकर आई हो तो अपना शुद्ध करा लेना!

कामिनी - (कमला से) खैर तुम्हारे कहने से मान लिया जाय कि श्लोक अशुद्ध है मगर उसका मतलब तो अशुद्ध नहीं है।

कमला - नहीं-नहीं, मतलब को कौन अशुद्ध कहता है, मतलब तो ठीक और सच है।

कामिनी - तो बस फिर हो चुका। बीबी, दुनिया में श्लोक की बड़ी कदर होती है, पण्डित लोग अगर कोई झूठी बात भी समझाना चाहते हैं तो झट श्लोक बनाकर पढ़ देते हैं, सुनने वाले को विश्वास हो जाता है, और यह तो वास्तव में सच्चा श्लोक है।

कामिनी ने इतना कहा ही था कि सामने से किसी को आते देख चौंक पड़ी और बोली, "आहा हा! देखो किशोरी बहिन की बात कैसी सच निकली! लो कमला रानी देख लो और अपना कान पकड़ो!"

जिस जगह किशोरी, कामिनी और कमला बैठी बातें कर रही थीं उसके सामने ही की तरफ इस स्थान में आने का रास्ता था। यकायक जिस पर निगाह पड़ने से कामिनी चौंकी, वह लक्ष्मीदेवी थी, उसके बाद कमलिनी और लाडिली दिखाई पड़ीं और सबके बाद इन्द्रदेव पर नजर पड़ी।

किशोरी - देखो बहिन, हमारी बात कैसी सच निकली।

कामिनी - बेशक, बेशक।

कमला - कृष्णा जिन्न सच ही कह गये थे कि उन तीनों को भी यहीं भेजवा दूंगा।

किशोरी **-** **(**खड़ी होकर**)** चलो हम लोग आगे चलकर उन्हें ले आवें।

ये तीनों लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को देखकर बहुत ही खुश हुईं और वहां से उठकर कदम बढ़ाती हुई उनकी तरफ चलीं। वे तीनों बीच वाले मकान के पास पहुंचने न पाई थीं कि ये सब उनके पास जा पहुंचीं और इन्द्रदेव को प्रणाम करने के बाद आपस में बारी-बारी से एक-दूसरे के गले मिलीं। भैरोसिंह भी उसी जगह आ पहुंचे और कुशलक्षेम पूछकर बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद सब कोई मिलकर उसी बंगले में आए जिसमें किशोरी, कामिनी और कमला रहती थीं और इन्द्रदेव बीच वाले दो मंजिले मकान में चले गये जिसमें भैरोसिंह का डेरा था।

यद्यपि वहां खिदमत करने के लिए लौंडियों की कमी न थी तथापि कमला ने अपने हाथ से तरह-तरह की खाने की चीजें तैयार करके सभों को लिखाया-पिलाया और

मोहब्बत भरी हंसी-दिल्लगी की बातों से सभों का दिल बहलाया। रात के समय जब हर एक काम से निश्चिन्त होकर एक कमरे में सब बैठीं तो बात-चीत होने लगी।

किशोरी - (लक्ष्मीदेवी से) जमाने ने हम लोगों को जुदा कर दिया था मगर ईश्वर ने कृपा करके बहुत जल्द मिला दिया।

लक्ष्मीदेवी - हां बहिन, इसके लिए मैं ईश्वर को धन्यवाद देती हूं। मगर मेरी समझ में अभी तक नहीं आता कि कृष्णा जिन्न कौन है जिसके हुक्म से कोई भी मुंह नहीं मोड़ता। देखो तुम भी उसी की आज्ञानुसार यहां पहुंचाई गईं और हम लोग भी उसी की आज्ञा से यहां लाये गए। जो हो मगर समें कोई शक नहीं कि कृष्णा जिन्न बहुत ही बुद्धिमान और दूरदर्शी है। यह सुनकर हम लोगों को बड़ी खुशी हुई कि कृष्णा जिन्न की चालाकियों ने तुम लोगों की जान बचा ली।

कामिनी - यह खबर तुम्हें कब मिली?

लक्ष्मीदेवी - इन्द्रदेवजी जमानिया गये थे। उस जगह कृष्णा जिन्न की चीठी पहुंची जिससे सब हाल मालूम हुआ और उस चीठी के मुताबिक हम लोग यहां पहुंचाये गए।

किशोरी - जमानिया गए थे! राजा गोपालसिंह ने बुलाया होगा?

लक्ष्मीदेवी - (ऊंची सांस लेकर) वे क्यों बुलाने लगे थे, उन्हें क्या गर्ज पड़ी थी हां हमारे पिता का पता लगाने गए थे, सो वहां जाने पर कृष्णा जिन्न की चीठी ही से यह भी मालूम हुआ कि भूतनाथ उन्हें छुड़ाकर चुनारगढ़ ले गया। ईश्वर इसका भला करे, भूतनाथ बात का धनी निकला।

किशोरी - (खुश होकर) भूतनाथ ने यह बहुत बड़ा काम किया। फिर भी उसके मुकद्दमे में बड़ी उलझन निकलेगी।

कामिनी - इसमें क्या शक है?

किशोरी - अच्छा तो जमानिया में जाने से और भी किसी का हाल मालूम हुआ?

कमलिनी - हां दोनों कुमारों से दूर की मुलाकात और बातचीत हुई क्योंकि वे तिलिस्म तोड़ने की कार्रवाई कर रहे थे, और वहीं इन्द्रदेव ने अपनी लड़की इन्दिरा को पाया और अपनी स्त्री सर्यू को भी देखा।

किशोरी - (चौंककर और खुश होकर) यह बड़ा काम हुआ! वे दोनों इतने दिनों तक कहां थीं और कैसे मिलीं?

लक्ष्मी - वे दोनों तिलिस्म में फंसी हुई थीं, दोनों कुमारों की बदौलत उनकी जान बची।

इस जगह लक्ष्मीदेवी ने सर्यू और इन्दिरा का किस्सा पूरा-पूरा बयान किया जिसे सुनकर वे तीनों बहुत प्रसन्न हुईं और कमला ने कहा, "विश्वासघातियों और दुष्टों के लिए उस समय जमानिया बैकुण्ठ हो रहा था!"

लक्ष्मी - तभी तो मुझे ऐसे-ऐसे दुःख भोगने पड़े जिनसे अभी तक छुटकारा नहीं मिला, मगर मैं नहीं कह सकती कि अब मेरी क्या गति होगी और मुझे क्या करना होगा।

किशोरी - क्या जमानिया में इन्द्रदेव से राजा गोपालसिंह ने तुम्हारे विषय में कोई बातचीत नहीं की

लक्ष्मी - कुछ भी नहीं, सिर्फ इतना कहा कि तुम इन तीनों बहिनों को कृष्णा जिन्न की आज्ञानुसार वहां पहुंचा दो जहां किशोरी, कामिनी और कमला हैं। वहां स्वयं कृष्णा जिन्न जाएंगे, उसी समय जो कुछ वे कहें सो करना, शायद कृष्णा जिन्न उन सभों को यहां ले आवें।

कामिनी - (हाथ मलकर) बस!

लक्ष्मी - बस, और कुछ भी नहीं पूछा और न इन्द्रदेवजी ही ने कुछ कहा, क्योंकि उन्हें भी इस बात का रंज है।

किशोरी - रंज हुआ ही चाहिए, जो कोई सुनेगा उसी को इस बात का रंज होगा। वे तो बेचारे पिता ही के बराबर ठहरे, क्यों न रंज करेंगे! (कमलिनी से) तुम तो अपने जीजाजी के मिजाज की बड़ी तारीफ करती थीं!

कम - बेशक वे तारीफ के लायक हैं, मगर इस मामले में तो मैं आप हैरान हो रही हूं कि उन्होंने ऐसा क्यों किया! उनके सामने ही दोनों कुमारों ने बड़े शौक से तुम लोगों का हाल इन्द्रदेव से पूछा और सभों को जमानिया में बुला लेने के लिए कहा मगर उस पर भी राजा साहब ने हमारी दुखिया बहिन को याद न किया, आशा है कि कल तक कृष्णा जिन्न भी यहां आ जायंगे, देखें वह क्या करते हैं।

लक्ष्मी - करेंगे क्या अगर वह मुझे जमानिया चलने के लिए कहेंगे भी तो मैं बेइज्जती के साथ जाने वाली नहीं हूं। जब मेरा मालिक मुझे पूछता ही नहीं तो मैं कौन-सा मुंह लेकर उसके पास जाऊं और किस सुख के लिए या किस आशा पर इस शरीर को रक्खूं।

कमला - नहीं-नहीं, तुम्हें इतना रंज न करना चाहिए...।

कामिनी **-** (बात काटकर) रंज क्यों न करना चाहिए! भला इससे बढ़कर भी कोई रंज दुनिया में है! जिसके सबब से और जिसके खयाल से इस बेचारी ने इतने दुःख भोगे और ऐसी अवस्था में रही वही जब एक बात न पूछे तो कहो रंज हो कि न हो और नहीं तो इस बात का खयाल करते कि इसी की बहिन या उनकी साली की बदौलत उनकी जान बची, नहीं तो दुनिया से उनका नाम-निशान ही उठ गया था!

लाडिली - बहिन, ताज्जुब तो यह है कि इनकी खबर न ली तो न सही अपनी उस अनोखी मायारानी की सूरत तो आकर देख जाते जिसने उनके साथ...।

कामिनी **-** (जल्दी से) हां और क्या उसे भी देखने न आए! उन्हें तो चाहिए था कि रोहतासगढ़ पहुंचकर उसकी बोटी-बोटी अलग कर देते!

इस तरह से ये सब बड़ी देर तक आपस में बातें करती रहीं। लक्ष्मीदेवी की अवस्था पर सभों को रंज, अफसोस और ताज्जुब था। जब रात ज्यादे बीत गई तो सभों ने चारपाई की शरण ली। दूसरे दिन उन्हें कृष्णा जिन्न के आने की खबर मिली।

बयान **- 14**

किशोरी, कामिनी, कमलिनी, लक्ष्मीदेवी, कमला और लाडिली सभी को कृष्णा जिन्न के आने का इन्तजार था। सभी के दिल में तरह-तरह की बातें पैदा हो रही थीं और सभों को इस बात की आशा लग रही थी कि कृष्णा जिन्न के आने पर इस बात का पता लग जायेगा कि कृष्णा जिन्न कौन है और राजा गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी की सुध क्यों भुला दी।

आखिर दूसरे दिन कृष्णा जिन्न भी वहां आ पहुंचा। यद्यपि वह एक ऐसा आदमी था जिसकी किसी को भी खबर न थी, कोई भी नहीं कह सकता था कि वह कौन और कहां का रहने वाला है, न कोई उसकी जात बात सकता था और न कोई उसकी ताकत और सामर्थ्य के विषय में ही कुछ वादविवाद कर सकता था, तथापि उसकी

हमदर्दी और कार्रवाई से सभी खुश थे और इसलिए कि राजा वीरेन्द्रसिंह उसे मानते थे सभी उसकी कदर करते थे। गुप्त स्थान में पहुंच वह सभों को चौकन्ना कर चुका था, इसलिए किशोरी और लक्ष्मीदेवी इत्यादि को उससे पर्दा करने की कोई आवश्यकता न थी और न ऐसा करने का उन्हें हुक्म था अस्तु कृष्णा जिन्न के आने की खबर पाकर सब खुश हुईं और बीच वाले दो मंजिले मकान में जिसमें सबके पहिले आकर उसने इन्द्रदेव से मुलाकात की थी, चलने के लिए तैयार हो गईं, मगर उसी समय भैरोसिंह ने बंगले पर आकर लक्ष्मीदेवी इत्यादि से कहा कि कृष्णा जिन्न स्वयम् वहीं चले आ रहे हैं।

थोड़ी देर बाद कृष्णा जिन्न बंगले पर आ पहुंचा। लक्ष्मीदेवी, कमलिनी, लाडिली, किशोरी, कामिनी और कमला ने आगे बढ़कर उसका इस्तकबाल (अगवानी) किया और इज्जत के साथ लाकर एक ऊंची गद्दी के ऊपर बैठाया। उसकी आज्ञानुसार इन्द्रदेव और भैरोसिंह गद्दी के नीचे दाहिनी तरफ बैठे और लक्ष्मीदेवी इत्यादि को सामने बैठने के लिए कृष्णा जिन्न ने आज्ञा दी और सभों ने खुशी से उसकी आज्ञा स्वीकार की। कृष्णा जिन्न ने सभों का कुशल-मंगल पूछा और फिर यों बातचीत होने लगी -

किशोरी - आपकी बदौलत हम लोगों की जान बच गई, मगर उन लौंडियों के मारे जाने का रंज है।

कृष्णा - यह सब ईश्वर की माया है, वह जो चाहता है, करता है। यद्यपि मनोरमा ने कई शैतानों को साथ लेकर तुम लोगों का पीछा किया था मगर उसके गिरफ्तार हो जाने ही से उन सभों का खौफ जाता रहा। अब जो मैं खयाल करके देखता हूं तो तुम लोगों का दुश्मन कोई भी दिखाई नहीं देता, क्योंकि जिन दुष्टों की बदौलत लोग दुश्मन हो रहे थे या यों कहो कि जो लोग उनके मुखिया थे गिरफ्तार हो गए, यहां तक कि उन लोगों को कैद से छुड़ाने वाला भी कोई न रहा।

कमलिनी - ठीक है, तो अब हम लोगों को छिपकर यहां रहने की क्या जरूरत है?

कृष्णा - (हंसकर) तुम्हें तो तब भी छिपकर रहने की जरूरत नहीं पड़ी जब चारों तरफ दुश्मनों का जोर बंधा हुआ था, आज की कौन कहें मगर हां, (हाथ का इशारा करके) इन बेचारियों को अब यहां रहने की कोई जरूरत नहीं और अब इसीलिए मैं यहां आया हूं कि तुम लोगों को जमानिया ले चलूं। वहां से फिर जिसको जिधर जाना होगा, चला जायगा।

लक्ष्मी - तो आप हम लोगों को चुनारगढ़ नहीं ले चलते या वहां जाने की आज्ञा क्यों नहीं देते?

कृष्णा - नहीं-नहीं, तुम लोगों को पहिले जमानिया चलना चाहिए। यह केवल मेरी आज्ञा ही नहीं बल्कि मैं समझता हूं कि तुम लोगों की भी यही इच्छा होगी। (लक्ष्मीदेवी से) तुम तो जमानिया की रानी ही ठहरीं, तुम्हारी रिआया खुशी मनाने के लिए उस दिन का इन्तजार कर रही है जिस दिन तुम्हारी सवारी शहर के अन्दर पहुंचेगी, और कमलिनी तथा लाडिली तुम्हारी बहिन ही ठहरीं...।

लक्ष्मीदेवी **-** (बात काटकर) बस-बस, मैं बाज आई जमानिया की रानी बनने से! वहां जाने की मुझे कोई जरूरत नहीं, और मेरी दोनों बहिनें भी जहां मैं रहूंगी वहीं मेरे साथ रहेंगी।

कृष्णा - क्यों-क्यों, ऐसा क्यों?

लक्ष्मी - मैं इसलिए विशेष बात कहना नहीं चाहती कि आपने यद्यपि हम लोगों की बड़ी सहायता की है और हम लोग जन्म-भर आपकी ताबेदारी करके भी उसका बदला नहीं चुका सकते तथापि आपका परिचय न पाने के कारण...।

कृष्णा - ठीक है, ठीक है, अपरिचित पुरुष से दिल खोलकर बातें करना कुलवंती स्त्रियों का धर्म नहीं है, मगर मैं यद्यपि इस समय अपना परिचय नहीं दे सकता तथापि यह कहे देता हूं कि नाते में राजा गोपालसिंह का छोटा भाई हूं इसलिए तुम्हें भावज मानकर बहुत कुछ कहने और सुनने का हक रखता हूं। तुम निश्चय रक्खो कि मेरे विषय में राजा गोपालसिंह तुम्हें कभी उलाहना न देंगे चाहे तुम मुझसे किसी तरह पर बातचीत क्यों न करो! (कुछ सोचकर) मगर मैं समझ रहा हूं कि तुम जमानिया जाने से क्यों इनकार करती हो। शायद तुम्हें इस बात का रंज है कि यकायक तुम्हारे जीते रहने की खबर पाकर भी गोपालसिंह तुम्हें देखने के लिए न आए...।

कमलिनी - देखने के लिए आना तो दूर रहा अपने हाथ से एक पुर्जा लिखकर यह भी न पूछा कि तेरा मिजाज कैसा है?

लाडिली - आने - जाने वाले आदमी तक से भी हाल न पूछा!

लक्ष्मी **-** (धीरे से) एक कुत्ते की भी इतनी बेकदरी नहीं की जाती!

कमलिनी - ऐसी हालत में रंज हुआ ही चाहिए। जब आप यह कहते हैं कि हम राजा गोपालसिंह के छोटे भाई हैं, और मैं समझती हूं कि आप झूठ भी नहीं कहते होंगे, तभी हम लोगों को इतना कहने का हौसला भी होता है। आप ही कहिए कि राजा साहब को क्या यही उचित था?

कृष्णा - मगर तुम इस बात का क्या सबूत रखती हो कि राजा साहब ने इनकी बेकदरी की औरतों की भी विचित्र बुद्धि होती है! असल बात तो जानतीं नहीं और उलाहना देने पर तैयार हो जाती हैं!

कमलिनी - सबूत अब इससे बढ़कर क्या होगा जो मैं कह चुकी हूं अगर एक दिन के लिए चुनारगढ़ आ जाते तो क्या पैर की मेंहदी छूट जाती!

कृष्णा - अपने बड़े लोगों के सामने अपनी स्त्री को देखने के लिए आना क्या उचित होता! मगर अफसोस, तुम लोगों को तो इस बात की खबर ही नहीं कि राजा गोपालसिंह महाराजा वीरेन्द्रसिंह के भतीजे होते हैं और इसी सबब से लक्ष्मीदेवी को अपने घर में आ गई जानकर उन्होंने किसी तरह की जाहिरदारी न की।

सब **-** (ताज्जुब से) क्या महाराज उनके चाचा होते हैं?

कृष्णा - हां, यह बात पहिले केवल हमीं दोनों आदमियों को मालूम थी और तिलिस्म तोड़ते समय दोनों कुमारों को मालूम हुई या आज मेरी जुबानी तुम लोगों ने सुनी! खुद महाराज वीरेन्द्रसिंह को भी अभी तक यह मालूम नहीं है।

लक्ष्मी - अच्छा-अच्छा, अब नातेदारी इतनी छिपी हुई थी तो...।

कमलिनी **-** (लक्ष्मीदेवी को रोककर) बहिन, तुम रहने दो मैं इनकी बातों का जवाब दे लूंगी! (कृष्णा जिन्न से) तो क्या गुप्त रीति से वह एक चीठी भी नहीं भेज सकते थे?

कृष्णा - चीठी भेजना तो दूर रहा, गुप्त रीति से खुद कई दफे आकर के इनको देख भी गये हैं।

लाडिली - अगर ऐसा ही होता तो रंज काहे का था!

कमलिनी - इस बात को तो वह कदापि साबित नहीं कर सकते!

कृष्णा - यह बात बहुत सहज में साबित हो जायेगी और तुम लोग सहज ही में मान भी जाओगी मगर जब उनका और तुम्हारा सामना होगा तब।

कमलिनी - तो आपकी राय है कि बिना सन्तोष हुए और बिना बुलाये बेइज्जती के साथ हमारी बहिन जमानिया चली जाये?

कृष्णा - बिना बुलाये कैसे, आखिर मैं यहां किसलिए आया हूं। (जेब से एक चीठी निकालकर और लक्ष्मीदेवी के हाथ में देकर) देखो उनके हाथ की लिखी चीठी पढ़ो।

चीठी में यह लिखा हुआ था -

"जिरंजीव कृष्णा योग्य लिखी गोपालसिंह का आशीर्वाद - आज तीन दिन हुए एक पत्र तुम्हें भेज चुका हूं। तुम छोटे भाई हो इसलिए विशेष लिखना उचित नहीं समझता, केवल इतना लिखता हूं कि चीठी देखते ही चले आओ और अपनी भावज को तथा उनकी दोनों बहिनों को जहां तक जल्दी हो सके, यहां ले आओ।"

इसी चीठी को बारी-बारी से सभों ने पढ़ा।

कमलिनी - मगर इस चीठी में कोई ऐसी बात नहीं लिखी है जिससे लक्ष्मीदेवी के साथ हमदर्दी पाई जाती हो! जब हाथ दुखाने बैठे ही थे तो एक चीठी इनके नाम की भी लिख डाली होती! इन्हें नहीं तो मुझी को कुछ लिख भेजा होता, मेरा-उनका सामना हुए भी तो बहुत दिन नहीं हुए। मालूम होता है कि थोड़े ही दिनों में वे बेमुरौवत और कृतघ्न भी हो गए।

कृष्णा - कृतघ्न का शब्द तुमने बहुत ठीक कहा! मालूम होता है कि तुम उन पर अपनी कार्रवाइयों का अहसान डाला चाहती हो?

कमलिनी - (क्रोध से) क्यों नहीं क्या मैंने उनके लिए थोड़ी मेहनत की है और इसका क्या यही बदला था?

कृष्णा - जब अहसान और उसके बदले का खयाल आ गया तो मुहब्बत कैसी और प्रेम कैसा मुहब्बत और प्रेम में अहसान और बदला चुकाने का तो खयाल ही नहीं होना चाहिए। यह तो रोजगार और लेने-देने का सौदा हो गया! और अगर तुम इसी बदला चुकाने वाली कार्रवाई को प्रेम भाव समझती हो तो घबराती क्यों हो समझ लो कि दुकानदार नादेहन्द है मगर बदला देने योग्य है, कभी-न-कभी बदला चुका ही जायेगा। हाय, हाय, औरतें भी कितना जल्द अहसान जताने लगती हैं! क्या तुमने कभी यह भी सोचा कि तुम पर किसने अहसान किया और तुम उसका बदला किस तरह चुका सकती हो अगर तुम्हारा ऐसा ही मिजाज है और बदला चुकाये जाने की

तुम ऐसी ही भूखी हो तो बस हो चुका। तुम्हारे हाथों से किसी गरीब, असमर्थ या दीन-दुखिया का भला कैसे हो सकता है क्योंकि उसे तो तुम बदला चुकाने लायक समझोगी ही नहीं!

कम - (कुछ शर्माकर) क्या राजा गोपालसिंह असमर्थ और दीन हैं?

कृष्णा - नहीं हैं। तो तुमने राजा समझ के उन पर अहसान किया था अगर ऐसा है तो मैं तुम्हें उनसे बहुत-सा रुपया दिलवा सकता हूं।

कमलिनी - जी, मैं रुपये की भूखी नहीं हूं।

कृष्णा - बहुत ठीक, तब तुम प्रेम की भूखी होगी!

कमलिनी - बेशक!

कृष्णा - अच्छा तो जो आदमी प्रेम का भूखा है उसे दीन, असमर्थ और समर्थ में अहसान करते समय भेद क्यों दिखने लगा और इसके देखने की जरूरत ही क्या है ऐसी अवस्था में यही जान पड़ता है कि तुम्हारे हाथों से गरीब और दुखियों को लाभ नहीं पहुंच सकता क्योंकि वे न तो समर्थ हैं और न तुम उनसे उस अहसान के बदले में प्रेम ही पाकर खुश हो सकती हो।

कमलिनी - आपके इस कहने से मेरी बात नहीं कटती। प्रेमभाव का बर्ताव करके तो अमीर और गरीब आदमी भी अहसान का बदला उतार सकता है! और कुछ नहीं तो वह कम-से-कम अपने ऊपर अहसान करने वाले का कुशल-मंगल ही चाहेगा। इसके अतिरिक्त अहसान और अहसान का जस माने बिना दोस्ती भी तो नहीं हो सकती। दोस्ती की तो बुनियाद ही नेकी है! क्या आप उसके साथ दोस्ती कर सकते हैं जो आपके साथ बदी करे?

कृष्णा - अगर तुम केवल उपकार मान लेने ही से खुश हो सकती हो तो चलकर राजा साहब से पूछो कि वह तुम्हारा उपकार मानते हैं या नहीं, या उनको कहो कि उपकार मानते हो तो इसकी मुनादी करवा दें जैसा कि लक्ष्मीदेवी ने इन्द्रदेव का उपकार मान के किया था।

लक्ष्मी - (शर्माकर) मैं भला उनके अहसान का बदला क्योंकर अदा कर सकती हूं और मुनादी कराने से होता ही क्या है?

कृष्णा - शायद राजा गोपालसिंह भी यही सोचकर चुप बैठ रहे हों और दिल में तुम्हारी तारीफ करते हों।

लक्ष्मी **-** (कमलिनी से) तुम व्यर्थ की बातें कर रही हो, इस वाद-विवाद से क्या फायदा होगा। मतलब तो इतना ही है कि मैं उस घर में नहीं जाना चाहती जहां अपनी इज्जत नहीं, पूछ नहीं, चाह नहीं और जहां एक दिन भी रही नहीं।

कृष्णा - अच्छा इन सब बातों को जाने दो, मैं एक दूसरी बात कहता हूं। उसका जवाब दो।

कमलिनी - कहिए।

कृष्णा - जरा विचार करके देखो कि तुम उनको तो बेमुरौवत कहती हो, इसका खयाल भी नहीं करतीं कि तुम लोग उनसे कहीं बढ़कर बेमुरौवत हो! राजा गोपालसिंह एक चीठी अपने हाथ से लिखकर तुम्हारे पास भेज देते तो तुम्हें सन्तोष हो जाता मगर चीठी के बदले में मुझे भेजना तुम लोगों को पसन्द न आया! अच्छा, अहसान जताने का रास्ता तो तुमने खोल ही दिया है, खुद गोपालसिंह पर अहसान बता चुकी हो, तो अगर मैं भी यह कहूं कि मैंने तुम लोगों पर अहसान किया है तो क्या बुराई है?

कमलिनी - कोई बुराई नहीं है और इसमें कोई सन्देह भी नहीं है कि आपने हम लोगों पर बहुत बड़ा अहसान किया है और बड़े वक्त पर ऐसी मदद की है कि कोई दूसरा कर ही नहीं सकता था। हम लोगों का बाल-बाल आपके अहसान से बंधा हुआ है।

कृष्णा - तो अगर मैं ही राजा गोपालसिंह बन जाऊं तो!

कृष्णा जिन्न की इस आखिरी बात ने सभी को चौंका दिया। लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली कृष्णा जिन्न का मुंह देखने लगीं। कृष्णा जिन्न इस समय भी ठीक उसी सूरत में था जिस सूरत में अबके पहिले कई दफे हमारे पाठक उसे देख चुके हैं।

कृष्णा जिन्न ने अपने चेहरे पर से एक झिल्ली-सी उतारकर अलग रख दी और उसी समय कमलिनी ने चिल्लाकर कहा, "आहा, ये तो स्वयं राजा गोपालसिंह हैं!" और तब यह कहकर उनके पैरों पर गिर पड़ी, "आपने तो हम लोगों को अच्छा धोखा दिया!"

(सोलहवां भाग समाप्त**)**

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati

चंद्रकांता संतति लोक विश्रुत साहित्यकार बाबू देवकीनंदन खत्री का विश्वप्रसिद्ध ऐय्यारी उपन्यास है।

बाबू देवकीनंदन खत्री जी ने पहले चन्द्रकान्ता लिखा फिर उसकी लोकप्रियता और सफलता को देख कर उन्होंने कहानी को आगे बढ़ाया और 'चन्द्रकान्ता संतति' की रचना की। हिन्दी के प्रचार प्रसार में यह उपन्यास मील का पत्थर है। कहते हैं कि लाखों लोगों ने चन्द्रकान्ता संतति को पढ़ने के लिए ही हिन्दी सीखी। घटना प्रधान, तिलिस्म, जादूगरी, रहस्यलोक, एय्यारी की पृष्ठभूमि वाला हिन्दी का यह उपन्यास आज भी लोकप्रियता के शीर्ष पर है।

बाबू देवकीनंदन खत्री लिखित चन्द्रकान्ता संतति हिन्दी साहित्य का ऐसा उपन्यास है जिसने पूरे देश में तहलका मचाया था। इस उपन्यास की लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इसे पढ़ने के लिए हजारों गैर-हिंदी भाषियों ने हिंदी सीखी। चंद्रकांता संतति उपन्यास को आधार बनाकर निरजा गुलेरी ने इसी नाम से टेलीविजन धारावाहिक बनाई। यह धारावाहिक दूरदर्शन के सर्वाधिक लोकप्रिय धारावाहिकों में शुमार हुई।

"चन्द्रकान्ता" और "चन्द्रकान्ता सन्तति" में यद्यपि इस बात का पता नहीं लगेगा कि कब और कहाँ भाषा का परिवर्तन हो गया परन्तु उसके आरम्भ और अन्त में आप ठीक वैसा ही परिवर्तन पायेंगे जैसा बालक और वृद्ध में। एक दम से बहुत से संस्कृत शब्दों का प्रचार करते तो कभी सम्भव न था कि उतने संस्कृत शब्द हम ग्रामीण लोगों को याद करा देते। इस पुस्तक के लिए वह लोग भी बोधगम्य उर्दू के शब्दों को अपनी विशुद्ध हिन्दी में लाने लगे जो आरम्भ में इसका विरोध करते थे।

काव्य के लिए ब्रज भाषा का प्रयोग होता था और गद्य के लिए खड़ी बोली का। लेखक ने इसी का अनुसरण करते हुए उपन्यास के काव्यांशों के लिए ब्रज भाषा चुना है।

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati in Hindi

1. चंद्रकांता संतति पहला भाग
2. चंद्रकांता संतति दूसरा भाग
3. चंद्रकांता संतति तीसरा भाग
4. चंद्रकांता संतति चौथा भाग
5. चंद्रकांता संतति पाँचवाँ भाग
6. चंद्रकांता संतति छठवां भाग
7. चंद्रकांता संतति सातवाँ भाग
8. चंद्रकांता संतति आठवाँ भाग
9. चंद्रकांता संतति नौवां भाग
10. चंद्रकांता संतति दसवां भाग
11. चंद्रकांता संतति ग्यारहवां भाग
12. चंद्रकांता संतति बारहवां भाग
13. चंद्रकांता संतति तेरहवां भाग
14. चंद्रकांता संतति चौदहवां भाग
15. चंद्रकांता संतति पन्द्रहवां भाग
16. चंद्रकांता संतति सोलहवां भाग
17. चंद्रकांता संतति सत्रहवां भाग
18. चंद्रकांता संतति अठारहवां भाग
19. चंद्रकांता संतति उन्नीसवां भाग
20. चंद्रकांता संतति बीसवां भाग
21. चंद्रकांता संतति इक्कीसवां भाग
22. चंद्रकांता संतति बाईसवां भाग
23. चंद्रकांता संतति तेईसवां भाग
24. चंद्रकांता संतति चौबीसवां भाग

https://www.hindiadda.com/chandrakanta-santati-part-xvi/